१/८ १५-१०-६९ (८)

युक्रांद

युवक क्रांति दल का मुख पत्र

वे पूछते हैं : प्रभु का मंदिर कहां है ?
और वे उसकी सीढ़ियों के द्वार पर ही खड़े हैं !

मैं उन्हें बुलाता हूँ लेकिन वे न तो सुनते ही हैं, न देखते ही हैं।

क्योंकि, शायद ऊपर चढ़ने से वे बचना चाहते हैं।

क्योंकि उनके सिरों पर अति बोझ है, धन का, ज्ञान का, यश का, त्याग का।

और ऊपर तो केवल वही चढ़ सकता है जो कि निर्बोझ है।

और जो ऊपर नहीं चढ़ता है, वह अनिवार्यतः नीचे उतरता है।

क्योंकि, प्रभु उपलब्धि के पूर्व जीवन में कोई ठहराव ही नहीं है।

उसका द्वार सदा खुला है, और उसकी सीढ़ियाँ सदा ही सबके सामने हैं।

लेकिन, वे पूछते हैं : प्रभु का मंदिर कहाँ है ?

दो शब्द

आचार्य श्री सारे देश में स्वतंत्र विचार की सरिता को प्रवाहित कर रहे हैं—बिना किन्हीं पूर्व आग्रहों के।
"युक्रांद का यह अंक आपको इस पावन सरिता में उतरने का आमंत्रण दे रहा है।

युक्रांद परिवार

युक्रांद
आचार्य श्री रजनीश जी की सृजनात्मक जीवन दृष्टि का पाक्षिक संकलन-पत्र

मानसेवी सम्पादक
अजित कुमार

सह-सम्पादक
आलोककुमार पांडे

वर्ष १ : अंक ८
१६ अक्टूबर १९६९

मूल्य
६० न० पै० एक प्रति
वार्षिक १२ रु०

मुखपृष्ठ लेआउट एवं छाया
शशिन् यादव

उद्घोष... उद्घोष... उद्घोष...

- हर आदमी को यह सौभाग्य मिला है कि वह अपने जैसा हो।
- यह मनुष्य का सबसे सर्वोच्च सम्मान है कि उसे अपना निर्माण स्वयं करना होता है।
- जिस समाज में बेईमानी के लिए पुरस्कार मिलता हो और ईमानदारी के लिए पाप जैसा प्रायश्चित करना पड़ता हो, उस समाज में लोग ईमानदार कैसे हो सकते हैं।
- धर्म, शास्त्रों में नहीं है। वहाँ शब्द हैं और शब्द की ही मनुष्य और मनुष्य के बीच दीवारें हैं। धर्म है स्वयं में।
- कोई भी व्यक्ति चोरी नहीं करना चाहता। अनैतिकता गरीब का चुनाव नहीं, मजबूरी है। गरीब समाज कभी नैतिक हो ही नहीं सकता। उसे नैतिकता की शिक्षा देना अन्याय है, पाप है।
- अतीत में कुछ भी नहीं, कोई कहे तो पीड़ा होती है, जबकि पीड़ा होना चाहिये अगर कोई कहे कि भविष्य में कुछ नहीं।
- भीख मांगना परिस्थितिवश नहीं है बल्कि भाग्यवादिता कारण है। एक अर्थ में गुलाम होना भी भिखमंगे होने से बेहतर है क्योंकि गुलाम को स्वतंत्र होने की संभावना है लेकिन भिखमंगे की तो आत्मा ही मर जाती है।
- मेरी बातों को समझने का एक ही अर्थ हो सकता है कि कुछ किया जाय। अगर आप कुछ करते नहीं हैं तो अच्छा होगा कि मेरी बातों को बेकार समझें और कूड़े में फेंक दें।

●●●

आचार्य रजनीश से एक भेंट

—शिव

आचार्य रजनीश जी के सान्निध्य में मुझे जिस शांति एवं आनन्द का अनुभव होता है वह इस जीवन में अन्य कहीं कभी नहीं हुआ है। मानव-मन की जिन अनंत गहराइयों तक उनकी पहुंच है उस पहुंच का व्यक्ति न मैंने सुना है और न देखा है। उनके समीप होने पर जिस अभय का बोध, जिस प्रेम की अनुभूति मुझे होती है वह अनुपम एवं अवर्ण्य है। सच तो यह है कि उनसे मेरी भेंट न हो गई होती तो या तो अभी तक मैं मर ही गया होता और या फिर पागल तो जरूर हो गया होता। उनके सामीप्य में कहीं किसी को चोट भी लगती है तो वह उसकी आँख खुलने का कारण बन जाती है। ऐसी ही अपनी एक भेंट की चर्चा करूं। शायद आपके लिए भी वह हितकर हो। इस भेंट में मेरे प्रिय मित्र नारायण भी साथ थे जिन्हें चोट मिली थी और मुझे शांति....। और शांति पाकर भी मैं दुखी था कि मेरे कारण मेरे मित्र को चोट मिली और वह चोट खाकर भी आनन्दित था कि उसकी आँख खुली। अस्तु:

२६ मार्च, १९६९ हम दोनों दिन के लगभग १० बजे आचार्य श्री के पास पहुंचे तो वे अपनी 'स्टडी' में अकेले ही बैठे थे और कुछ पढ़ रहे थे। हमें देख वे मुस्कराए। हम पास पहुंचे, प्रणाम किया और बैठ गए। कुशल क्षेम के बाद कुछ देर यों ही बातें होती रहीं। फिर मैं ही फूट पड़ा था। मैंने कहा: "ये मित्र मुझे 'कमेन्ट' करते हैं कि मैं इनसे पहले से आपके संपर्क में हूं फिर भी भीतर आने में डरता हूं और ये बाद में सम्पर्क में आने के बावजूद अधिक खुल गए हैं। मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि आपका क्या विचार है? क्या मैं डरपोक अथवा दब्बू हूं?"

आचार्य श्री नारायण की ओर मुखातिब होकर बोलने लगे—हर व्यक्ति अपने को दूसरे पर थोप रहा है या थोपना चाहता है। इस थोपे जाने से शायद ही कोई बच पाता हो। मैं देखता हूं कि सारी दुनियां ही गलत निर्मित हो गई है। पति अपने को पत्नी पर थोप रहा है। मां-बाप अपने को बच्चों पर थोप रहे हैं। मां-बाप अगर नहीं थोपें तो स्कूल में शिक्षक थोपेगा। मित्र, मित्र पर थोप रहा है। कोई भी किसी का मित्र नहीं है। मित्रता क्या है, यह तक हमें पता नहीं है। मित्र व शत्रु में कोई भेद नहीं है। शत्रु कहता है मेरी बात मानलो वर्ना लाठी मार दूंगा। मित्र कहता है मेरी बात मानलो वर्ना मित्रता छोड़ दूंगा। एक ही बात है। कोई फर्क नहीं है मित्र व शत्रु में। होना यह चाहिए कि हम समझ लें कि अमुक.... ऐसा है और उसके वैसा होने को स्वीकार कर लें। स्वीकृति दें उसे। और ऐसा नहीं कर सकते तो अधिक ठीक होगा कि उसे छोड़ दें, अकेला छोड़ दें मगर उस पर थोपें नहीं अपने को, यह सीधी हत्या है उसकी। और यही सारी मनुष्यता की विकृति और तनाव का कारण है। क्योंकि सचाई यह है कि हर एक की अपनी निजता है, अपना व्यक्तित्व है, अपनी अलग विशेषता है।

अभी मैंने एक मनोवैज्ञानिक की एक अद्भुत पुस्तक पढ़ी है। उसमें लिखा है कि वहां पिछले २० वर्षों से पागलों पर एक प्रयोग चलता है और उसके अच्छे परिणाम निकले हैं। वह प्रयोग है स्वीकृति का। वह कहता है पागलखाना पागलों के लिए सही जगह नहीं है। पागलों का उपचार वहां नहीं हो सकता। वह तो समाज की ओर से अंतिम अस्वीकृति है। अत: उस

प्रयोग के अनुसार पागलों को स्वीकृति दी जाती है। अगर पागल गाली बकता है तो ठीक, अगर पागल नंगा नाचता है तो ठीक... और इस तरह १५–२० दिनों में वह 'रिलैक्स' हो जाता है और ठीक हो जाता है। स्वीकृति, अस्वीकृति के सारे तनावों को निकाल देती है। मानसिक रूप से जो पागल है उसका इलाज मात्र स्वीकृति है। हाँ, शारीरिक रूप से जो पागल हुआ हो उसके लिए चिकित्सा जरूर उपयोगी हो सकती है।

तो आपका ढंग अपना ढंग है। वह किसी और का नहीं हो सकता। न ही आपको कोशिश करनी चाहिए। आप सीधे बेधड़क चले आते हैं, यह आपका प्रेम है। कोई आता है और घण्टे भर बाहर खड़ा रहकर लौट जाता है, यह भी उसका प्रेम ही है। हो सकता है आपको खड़ा रहना पड़े तो दुख हो। हो सकता है ये सीधे चले आयें तो दुखी हो जायें और हो सकता है घण्टे भर खड़े रहकर भी ये आनंद में लौटते हों, इन्हें सुख मिलता हो।

नारायण ने कहा : आचार्य जी, फिर ये अधूरे और अव्यक्त क्यों लौटते हैं ? रास्ते में कहते हैं, अरे यह कहना था अरे वह पूँछना था.... इस तरह तो ये पागल हो जायेंगे।

आचार्य जी ने कहा– 'अगर कोई पागल होता है तो उसे बचा कौन सकता है। बचाने की कोशिश हम जो करते हैं उससे तो पागलपन बढ़ ही सकता है। जिसे चार दिन में पागल होना होगा वह एक ही दिन में पागल हो सकता है। हां हम उसे स्वीकृति दें। कभी बहुत ही आवश्यक हुआ तो आग्रह नहीं, निवेदन भर कर दिया कि मेरी तो यह समझ है, बस इतना ही काफी है। और फिर जो पागल नहीं हैं वे क्या कर ले रहे हैं ? मेरी समझ में तो कोई अपने निर्णय से आत्म-हत्या कर लेता है तो वह भी शुभ है। वह भी उसके विकास का क्रम है। सच तो यह है कि जिसे आत्म-हत्या कहा जाता है वह मेरे देखे मात्र देह-हत्या है। आत्म–हत्या वह है जब मैं किसी और जैसा बनना स्वीकार कर लेता हूं अथवा किसी और जैसा बनने की चेष्टा करने लगता हूं। जीना और मरना बहुत महत्वपूर्ण नहीं है। एक बच्चा एक वर्ष का होकर मरता है। कहाँ है इसमें दुख की बात ! वह अभी नहीं मरता तो ५० वर्ष का होकर मर जाता, ८० वर्ष का होकर मर जाता, क्या फर्क पड़ता है। और फिर हो सकता है पागल हो जाने वाला इतना संवेदनशील रहा हो कि जिस कुरूप दुनियां को हम सहते चले जाते हैं, वह सह न पाया हो। हो सकता है आत्म-हत्या करने वाला इतना संवेदनशील रहा हो कि दुनियां की बेवकूफियों में अपने को 'ऐडजेस्ट' न कर पाया हो। और जो पागल नहीं हो गए हैं, क्या वे पागल नहीं हैं ? जो मर नहीं गए हैं, क्या वे जी रहे हैं ? एक बिन्दु ऐसा भी है जिसे पार करके ही उसके पार जाया जा सकता है, उससे बचकर नहीं। मुर्गी के अण्डे में अगर उस जीव को कष्ट व परेशानी होती हो तो भी उसे झेलना पड़ेगा, तभी वह मुर्गी हो सकेगा। मुर्गी होने के पहले अण्डा में हो लेना जरूरी है। अभी बम्बई में एक मित्र ने पूछा था : "आपने नीत्शे को कभी महान् विचारक कहा है, सो क्यों कहा ? वह तो पागल हो गया था। फिर वह कैसा विचारक था जो खुद को पागल होने से भी न बचा सका।" मैंने उन्हें कहा– नीत्शे महान् विचारक था इसलिये ही वह पागल हो गया। वह विचार के उस बिन्दु पर पहुंच गया जहाँ पागल हो ही जाना था। पर यह जरूरी नहीं है कि जो महान् विचारक हो वह पागल हो ही जाय। यह भी जरूरी नहीं है कि जो महान् विचारक हो वह पागल न ही हो। कोई पागल न होकर भी महान् विचारक हो सकता है। कोई पागल होकर भी हो सकता है महान् विचारक हो। पागल होना या न होना विचारक होने की कसौटी नहीं है। और स्मरण रहे, सभी विचार नहीं करते। विचार कुछ लोग ही करते हैं। शेष तो बस जिये जाते हैं। और विचार करना शुभ है, भले ही वह पागल बना दे।'

और यह 'डर' नहीं है कि कोई घण्टे भर खड़ा रहता है कि कोई निकले और अगर कोई नहीं निकलता

तो लौट जाता है । कभी–कभी बहादुरी बेवकूफी भी सिद्ध होती है ।

जिन्दगी में छोटी-छोटी बातें भी बड़े-बड़े प्रभाव पैदा करती हैं । तुम यहाँ आते हो तो अपेक्षा करते हो कि कहूं—'बैठो' । अगर तुम आओ और मैं बैठने को न कहूं तो तुम नाराज हो जावोगे, तुम्हें दुख होगा । और जहां हम इतनी भी अपेक्षा करते हैं वहीं परतन्त्र हो जाते हैं, वहीं बन्धन खड़ा हो जाता है । फिर किसी के विचार को ही बदलने की अपेक्षा करना तो बहुत बड़ी बात है । फिर हम स्वतंत्र कैसे हो सकते हैं । और मित्र अगर बदल भी जाय, मित्र के विचार अगर आप जैसे हो भी जायें, मित्र का ढंग अगर आप जैसा हो भी जाय तो क्या होगा ? क्या सोचते हैं कि तब आप सन्तुष्ट हो जायेंगे ? बिल्कुल सन्तुष्ट नहीं होंगे । तब वह बेकार हो जायगा । तब वह ऊब पैदा करेगा । तब उसमें कुछ भी नया अथवा मौलिक नहीं नजर आयेगा । अभी कुछ दिनों पहले एक बड़े नगर में एक लड़की मिली । उसने एक लड़के का नाम लिया और कहा कि हम दोनों इसी प्रतीक्षा में थे कि आप आवें और अनुमति दें तो हम विवाह कर लें । मैं लड़की व लड़के दोनों के माँ-बाप से परिचिति था, लड़के को भी जानता था । मैंने स्वीकृत दे दी । लड़के के पिता से भी कह दिया कि अद्‌भुत लड़का है वह । जरूर विवाह कर दें । बात पक्की हो गई । कुछ दिनों बाद विवाह हो जाने को था । फिर अभी पिछली बार वहाँ जाना हुआ तो वह लड़की फिर मिली और उसने बताया कि अब वह उसके साथ विवाह नहीं करेगी क्योंकि वह तो हर बात में 'हां' कर देता है । कुछ भी कहें 'हां' कर देता है, सभी कुछ स्वीकार कर लेता है । अतः वह पति होने जैसा नहीं है । यह है मनुष्य का चित्त । पति, पति हो जायगा तब चित्त कहेगा कि पति मुझे प्यार नहीं करता, मेरी हर बात का विरोध करता है । और पति पत्नी को प्यार करेगा तो वह कहेगी कि वह पति होने के योग्य नहीं है ।

बिना स्वीकृत के प्रेम नहीं पैदा होता । उसी नगर की एक महिला मिलीं । उनको दुख था कि उनका पति उन्हें बेहद प्रेम करता है पर वे प्रेम नहीं कर पातीं उन्हें लगता है कि वे उतना प्रेम नहीं कर पातीं जितना उन्हें करना चाहिए । बाद में मालूम हुआ कि विवाह के पहले उनका एक युवक से प्रेम हो गया था । मैंने उन्हें सलाह दिया कि वह इस बात को अपने पति से बता दें तो हल्की हो जायगी । और उसने अपने पति से यह बात बता दी । पति का प्रेम और बढ़ गया कि यह इतनी सरल इतनी अकृत्रिम... । और महिला ने देखा कि यह बात बता देने से भी पति के प्रेम में कोई फर्क नहीं पड़ा । अब वे दोनों बहुत प्रसन्न हैं ।

रास्ता यही है कि मित्र जैसा है, उसे स्वीकार करें । समझ लें कि यह ऐसा ही है और प्रेम करें । आपकी यह स्वीकृति, हो सकता है उसे पागल होने से बचा ले । मगर अपने जैसा बनाने की चेष्टा तो उसे न भी होना हो तो पागल बना देगी ।

***

● सत्य अपने में है । उसे मानना नहीं जानना है । इसलिए ज्ञान श्रद्धा नहीं मांगता है । श्रद्धा अज्ञान की मांग है । श्रद्धा मात्र अंधी होती है । वह जाग्रत नहीं करती, वरन् सुलाती है ।

गांधीवाद : समाधान नहीं, समस्या ? ? ? ?

संकलन—आलोक कुमार पाण्डे

डा० राममनोहर लोहिया मरण-शैय्या पर पड़े थे। जीवन और मृत्यु के बीच झूलती उनकी चेतना....। वे एक ही बात दोहराते, बेहोशी में मरते क्षणों में वे बार-बार यह कहते सुने गए-मेरा देश सड़ गया है, मेरे देश की आत्मा सड़ गई है। यह कहते हुए ही उनकी मृत्यु हुई। पता नहीं उस मरते हुए अद्‌भुत आदमी की बात आप तक पहुंची है या नहीं पहुंची। लेकिन राममनोहर लोहिया जैसे विचारशील व्यक्ति को यह कहते हुए मरना पड़े कि मेरा देश सड़ गया, मेरे देश की आत्मा सड़ गई है तो कुछ विचारणीय है। क्यों सड़ गई है इस देश की आत्मा ? किसी देश की आत्मा सड़, कैसे जाती है ? जिस देश में विचार बन्द हो जाता है उस देश की आत्मा सड़ जाती है। जीवन का प्रवाह विचार का प्रवाह है। जीवन का प्रवाह जब रुक जाता है, विचार का प्रवाह जब रुक जाता है—तो जैसे कोई सरिता रुक जाय और डबरा बन जाय। फिर वो सागर तक तो नहीं जाती बनकर सूखती है, सडती है, गन्दी होती हैं; कीचड़ और दलदल पैदा होता है। इस देश में विचार की सरिता रुककर डबरा बन गई है। हमने विचार करना बन्द कर दिया है। हम तो विचार से भयभीत हो गए हैं ऐसा प्रतीत होता है। ऐसा लगता है विचार से हमारे भीतर कोई डर पैदा हो गया है। हम विश्वास की बात करते हैं, विचार की जरा भी बात नहीं करते। विचार करने में भय क्या हो सकता है ? विचार करने से इतने डरने की कंपने की बात क्या है ?

गांधी वर्ष शताब्दी चलती है। मैंने पिछले २ अक्टूबर को कुछ मित्रों को यह कहा कि यह वर्ष बड़े मौके का है, इस पूरे वर्ष गाँधी पर विचार किया जाय तो अच्छा। क्योंकि गांधी से बड़ा व्यक्ति संभवतः भारत के इतिहास में खोजना मुश्किल है। सन्यासी हुए हैं बहुत बड़े, त्यागी हुए हैं बहुत बड़े, धर्मात्मा हुए हैं बहुत बड़े। लेकिन धार्मिक और आध्यात्मिक व्यक्ति जीवन के बीच खड़े रहे हों जीवन के संघर्ष में लड़े हों, राजनीति से भाग न गए हों, ऐसे गांधी अकेले आदमी हैं। ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्ति पर क्या हम विचार नहीं करेंगे ? नहीं, मित्रों ने कहा विचार तो बहुत होगा। सभायें होगीं, प्रवचन होंगे, पुस्तकें छपेंगी, करोड़ों रुपया खर्च किया जावेगा। मैंने उनसे कहा--उसमें विचार जरा भी नहीं होगा, सिवाय प्रशंसा के। प्रशंसा विचार नहीं है। न ही निन्दा विचार है, न प्रशंसा विचार है। मित्र और भक्त प्रशंसा करते हैं, शत्रु और दुश्मन निंदा करते हैं। लेकिन न शत्रु विचार करते हैं और न मित्र विचार करते हैं। विचार निन्दा और प्रशंसा से भिन्न बात है। विचार है तटस्थ आलोचना। विचार है सृजनात्मक आलोचना, विचार है Creative criticism, निंदा का तो कोई सवाल ही नही है। प्रशंसा चलेगी वर्ष भर तक। प्रशंसा से क्या हित होगा हमारा या गांधी का-किसका ? गांधी की हम कितनी ही प्रशंसा करें उन्हें हम और बड़ा नहीं बना सकते हैं। गांधी की हम कितनी ही निंदा करें उन्हें हम छोटा नहीं बना सकते हैं। गांधी को निंदा से हम बड़े नहीं हो जायेंगे और न गाँधी की प्रशंसा से हमारी आत्मा को कोई लाभ होने वाला है लेकिन गांधी पर अगर विचार हो तो इस देश को आत्मा की गति मिल सकती है।

लेकिन विचार करने को कोई तैयार नहीं। मैंने कुछ बातें कहीं कि इन मुद्दों पर गांधी पर विचार होना चाहिए, तो पत्रकारों ने बम्बई के उन्हें इतने गलत और विकृत करके छापा कि जब महीने बाद मैं बंबई पहुंचा तो मैं तो हैरान रह गया। मुझे उन पत्रों को देखकर एक बात याद आई वेटिकन का पोप अमरीका गया था। न्यूयार्क के हवाई अड्डे पर उतरने के पहले उसके मित्रों ने कहा—और तो सब ठीक है, पत्रकारों से बहुत सावधान रहना। अगर वे कुछ पूँछे तो बहुत सोच-समझकर जवाब देना। वेटिकन के पोप ने कहा—सोच समझकर उत्तर देने का क्या मतलब! तो उनके साथियों ने कहा—जहाँ तक बने हाँ और न में उत्तर मत देना। जहाँ तक बच सको प्रश्न से, तो बचने की कोशिश करना।। जैसा कि राजनीतिज्ञ हमेशा करते हैं। राजनीतिज्ञ कभी हां और न में उत्तर नहीं देते। क्योंकि हाँ और न में पीछे Commitment होता है, कोई झंझट हो सकती है। राजनीतिज्ञ ऐसा उत्तर देता है कि जब जैसी जरूरत पड़े उससे वैसा अर्थ निकाला जा सके। वह गोल-मोल उत्तर देता है। तो वेटिकन के पोप के मित्रों ने कहा कि आप गोलमोल उत्तर देना। ऐसा उत्तर देना कि जो भी मतलब पीछे चाहा, निकाला जा सके। कुछ न समझ पड़े तो बचने की कोशिश करना। जैसे ही हवाई अड्डे पर पोप उतरा, पत्रकारों ने उसे घेर लिया और उन पत्रकारों ने पहला प्रश्न जो पूँछा पोप से, वह ये पूँछा—Would you like to visit any nudest club in New-york? क्या आप कोई नंगे लोगों का क्लब देखना पसन्द करेंगे जब तक आप न्यूयार्क में है। वेटिकन का पोप समझा आई झंझट। अगर मैं हाँ कहूं तो वे कहेंगे कि वेटिकन का पोप अमरीका की नंगी औरतें और नंगे लोगों को देखने के लिए आया हुआ है। अगर मैं कहूं कि नहीं, मैं नहीं देखना चाहता तो वे कहेंगे कि वेटिकन का पोप इतना डरता है नंगी औरतें और नंगे आदमी को देखने में, जरूर कोई मामला होना चाहिए। तो वेटिकन के पोप ने सोचा कि कोई सीधा साधा उत्तर देना ठीक नहीं। घबड़ाहट में उसने उल्टे प्रश्न पूँछ लिया उसने यह पूँछा कि Is there any nudest club in New-york? कोई नंगे लोगों का क्लब है न्यूयार्क में? ताकि सीधा कुछ न कहना पड़े, फिर बात टल गई, वह बड़ा खुश हुआ। लेकिन दूसरे दिन पहला प्रश्न अखबारों के मुखपृष्ठ पर बड़े-बड़े अक्षरों में क्या छपा था? छपा था कि महामहिम परम पूज्यनीय पोप ने हवाई अड्डे पर उतरते ही जो पहला प्रश्न पत्रकारों से पूछा वह यह कि Is there any nudest club in New-york? आते ही हवाई अड्डे पर वे महापुरुष यही पूँछने लगे लगे—नंगे लोगों का कोई क्लब है न्यूयार्क में? पत्रकारों से मैंने गांधीके सम्बन्ध में जो बातें कहीं थीं बम्बई लौटकरमुझे पता चला कि वेटिकन के पोप को जैसा अनुभव मिला होगा वह कैसा रहा होगा।

मेरी बातों को इतना ही बिगाड़ के तोड़-मरोड़ के प्रसंग के बाहर उपस्थित किया। उसका जोर से प्रचार किया मैं हैरान हुआ कि इसके पीछे क्या कारण हो सकता है। अभी जब गुजरात गया तो कारण पता चला। मोरारजी देसाई, ढेबर भाई, काका कालेलकर, स्वामी आनन्द जैसे प्रतिष्ठित लोगों ने भी मेरे विरोध में वहां भाषण दिए। तब मेरी समझ में आया कि गांधी पर विचार करने में गांधीवादी को डर है। गांधी को डर नहीं। गांधी पर विचार अंततः गांधीवाद पर विचार बन जावेगा गांधीवाद जो घबड़ाता है उस पर विचार नहीं किया जाना चाहिये। क्योंकि उसके ७० वर्ष का इतिहास बहुत कालिख और अंधेरे से भरा हुआ इतिहास है। सफेद कपड़ों के बीच काले आदमी की कहानी है ७० वर्षों की। और अगर गांधी पर विचार शुरू हुआ तो वह रुकेगा नहीं, वह गांधीवादी पर पहुंच जायेगा। तब मुझे समझ में आया कि गांधीवादी पत्र इतनी जोर से इस बात को क्यों प्रचार किए हैं। और मैंने कहा क्या था? मैंने यह कहा था कि जो समाज अपने महापुरुष की आलोचना नहीं करता, वह समाज शायदडरता है कि उसके महापुरुष बहुत छोटे हैं आलोचना में पिघल जायेंगे, बह जायेंगे। इतनी घबराहट एक ही बात का सबूत है कि अगर हम एक मिट्टी का पुतला बनाकर पानी में खड़ा कर दें तो डरेंगे क्योंकि उसके रंग रोगन के बह जाने का डर है। लेकिन प्रस्तर की, संगमरमर की प्रतिमायें तो वर्षा में खड़ी रहती हैं उनका कुछ बहता

नहीं वर्षा आती है तो और उनकी धूल बह जाती है और प्रतिमायें और स्वच्छ होकर निखर आती हैं। मेरी दृष्टि में महापुरुष पर जब भी आलोचना होती है– महापुरुष और निखर कर प्रगट होता है, छोटे लोग जरूर बह जाते हैं। उनके पास ऐसा कुछ भी नहीं है जो आलोचना की वर्षा में टिक सके। **गांधी को तो कोई भय नहीं हो सकता है आलोचना से लेकिन गांधीवादी को बहुत भय है। गांधीवादी छोटा आदमी है जो बड़े आदमी की आड़ में बड़े होने की कोशिश कर रहा है।** उसे डर है, वह अपने ही ढंग से सोचता है। उसे यह भय है कि जैसा छोटा मैं आदमी हूं कहीं गाँधी की आलोचना गांधी को नुकसान न पहुंचा दे। मेरी दृष्टि में गाँधी इतने बड़े व्यक्ति हैं कि आलोचना से उनका कोई भी अहित होने का नहीं है। बल्कि, उनकी स्पष्ट आलोचना गांधी के रूप को हमारी आँखों के सामने प्रगट करने में ज्यादा सफल हो सकेगी। उनकी कोई प्रशंसा हमारे प्राणों तक उन्हें नहीं पहुंचायेगी। लेकिन उनका सृजनात्मक विचार हमारे प्राणों में उन्हें पुर्नजीवित कर सकता है।

मेरी दृष्टि में–कोई महापुरुष ऐसा नहीं होता कि उससे भूलें न होती हों। हाँ महापुरुष छोटी भूलें नहीं करते हैं, महापुरुष बड़ी भूलें करते हैं अपने अनुपात मे। वे जितने बड़े होते हैं उतने ही बड़े काम करते हैं चाहे भूल करें, चाहे ठीक करें। महापुरुष छोटी भूलें नहीं करते हैं, छोटे काम ही नहीं करते हैं। और इसीलिए महापुरुष की भूल को देख पाना कठिन हो जाता है क्योंकि हम उतनी आँख खोलें, उतना विचार करें तो ही इन्हें दिखाई पड़ सकता है। लेकिन अगर हम न देखें तो हम उन भूलों को बार–बार दोहराते जा सकते हैं। १९२० के बाद गांधी के सामने एक सवाल था। वह सवाल था कि देश एक कैसे हो. एकता कैसे हो? और गांधी ने देश की एकता के लिए एक नारा दिया— हिन्दू–मुस्लिम एकता का, हिन्दू–मुस्लिम Unity का। गांधी से बड़ी भूल हो गई। हिन्दुस्तान में इसाई भी रहते हैं, बौद्ध भी रहते हैं, जैन भी रहते हैं, पारसी भी रहते हैं. आदिवासी भी रहते हैं, सिक्ख भी रहते हैं। लेकिन गांधी ने नारा दिया 'हिन्दू मुस्लिम एकता, हिन्दू–मुस्लिम भाई-भाई'। गांधी से बुनियादी भूल हो गई। जैसे ही गांधी ने यह कहा—"हिन्दू मुस्लिम एकता" वैसे मुसलमान और हिन्दू को अतिरिक्त महत्व मिल गया। जो खतरनाक सिद्ध हुआ। और मुसलमानों को भी यह दिखाई दे गया कि मेरी एकता ही असली बात है। अगर मैं एक होने को राजी नहीं, तो हिन्दुस्तान कुछ भी नहीं कर सकता है। अगर गांधी ने कहा होता— "भारतीय एकता"। हिन्दू-मुस्लिम एकता बहुत दुर्भाग्यपूर्ण चुनाव था। वो शब्द बहुत खतरनाक था। उसी शब्द के बीज ने पाकिस्तान का रूप लिया। वही शब्द विकसित हुआ और पाकिस्तान तक पहुंच गया। मुसलमान को Self–Conscious कर दिया गांधी ने, हिन्दू को भी Self–Conscious कर दिया। गांधी ने दोनों को ये चेतना दे दी कि हमीं सब कुछ हैं। हिन्दू–मुसलमान ही भारत है। 'हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई मुसलमान और हिन्दू को लगा हम ही, हमारे ही ऊपर सब कुछ निर्भर है। और मुसलमान को ये चेतना, स्पष्ट यह अनुभव करा गई कि वह साथ खड़ा नहीं होता है तो भारत की एकता कभी नहीं हो सकती है। आखिर इसी समझौते पर हिन्दुस्तान की आत्मा विभाजित हुई। हिन्दुस्तान दो टुकडों में टूटा। शायद हजारों वर्ष लग जायेंगे हिन्दुस्तान को, अपने शरीर को एक बनाने में, शायद न भी बना पाये। लेकिन एक छोटी सी भूल, शब्दों का चुनाव। लेकिन गांधी से भूल हुई तो पीछे कारण था। गांधी यद्यपि मानते थे कि सारे धर्म समान है सारेधर्म बराबर मूल्य के हैं। लेकिन फिर भी गांधी के मन से ये भ्रम कभी नहीं मिटा कि मैं हिन्दू हूं। वे यह हमेशा कहते रहे कि मैं हिन्दू हूं। काश! गांधी इतनी हिम्मत और कर लेते और कह सकते कि मैं सिर्फ मनुष्य हूं। न मैं हिन्दू हूं न मैं मुसलमान हूं, तो हिन्दुस्तान का विभाजन कभी भी नहीं हो सकता था। लेकिन गांधी का यह खयाल कि मैं हिन्दू हूं जिन्ना को मुसलमान और मुसलमान और मुसलमान बनाता चला गया। पता है आपको गांधी की मृत्यु पर जिन्ना ने जो Tribute दी जो संवेदना प्रगट की, क्या

कहा ? कहा कि Gandhi was the great Hindu Leader गांधी एक बड़े हिन्दू नेता थे । लेकिन हिन्दू नेता कहना जिन्ना नहीं भूला । गांधी भी मरने के पहले वसीयत किये–कि मेरी लाश को न बचाया जाय, क्योंकि लाश को बचाना ईसाईयत का रास्ता है । मैं हिन्दू ढ़ंग से संस्कार चाहता हूं । मरने के बाद भी हिन्दू ढ़ंग का संस्कार चाहते हैं । गांधी के मन से हिन्दू का भाव नहीं जा सका । गांधी अद्‌भुत व्यक्ति थे । लेकिन कहीं एक, एक हिन्दू की पकड़ कोने में बैठी रह गई और वह हिन्दू की पकड़ सारे हिन्दुस्तान के लिए घातक सिद्ध हुई ।

कोई छोटा मोटा व्यक्ति, मेरा जैसा व्यक्ति अगर अपने को हिन्दू या मुसलमान मानता रहता तो कोई नुकसान नहीं हो सकता था । लेकिन गांधी जैसे व्यक्ति जो कि सारे मुल्क की आत्मा के प्रतिनिधि थे, उनको ये ख्याल होना कि मैं हिन्दू हूं—खतरनाक है । बहुत मंहगा पड़ गया । लेकिन इसे सोचना जरूरी है जिससे यह भूल आगे बार–बार दोहराई न जाये । यह भूल बार-बार दोहराई जा सकती है । हिन्दुस्तान को ऐसे नेतृत्व की जरूरत है जो न हिन्दू हो, न मुसलमान हो, न जैन हो, न ईसाई हो । हिन्दुस्तान को एक ऐसे नेतृत्व की जरूरत है जिसका हिन्दी पर आग्रह न हो, तामिल पर आग्रह न हो, बंगाली पर आग्रह न हो । नहीं तो फिर ये भूल दोहरेगी यह हिन्दुस्तान और दस टुकड़ों में टूट सकता है । जैसे कल हिन्दू-मुसलमान ने तोड़ दिया । आने वाले दस वर्षों में हिन्दी और गैर हिन्दी टूट सकते हैं । लेकिन गाँधी की भूल पर विचार कर लेने से यह ख्याल में आ सकता है कि यह भूल फिर न दोहरा दी जाये । गांधी ने कहा हिन्दू, मुसलिम भाई–भाई । फिर हम आजाद हुए और हमने एक नारा लगाया हिन्दी-चीनी भाई–भाई । हम फिर वही भूल दोहरा रहे थे । एशिया में बर्मी नहीं रहते, जापानी नहीं रहते, कोरियन नहीं रहते । एशिया में सीलोनी नहीं रहते, एशिया में थाई नहीं रहते । एशिया में सिर्फ हिन्दी और चीनी रहते हैं । वही बेवकूफी जो हिन्दू-मुसलमान के साथ हुई थी वही बेवकूफी हमने फिर दोहराई हिन्दी-चीनी भाई-भाई । चीन समझ गया कि जैसे ये मुसलमान से डरते थे वैसे डरना हमसे शुरू कर दिया है । ये समझने में देर न थी । हम जिससे डरते हैं उसी को भाई-भाई कहते हैं । जिससे हम नहीं डरते उसकी हम बात ही नहीं करते । यह हमारे Fear का हमारे भय का सबूत हो गया है । हम जिससे डरेंगे उसी को कहेंगे कि हम और आप तो भाई-भाई हैं । लेकिन जिसको हम भाई कहते हैं वह समझ जाता है कि भाई हम किसको कहते हैं । गल्ती जो मुसलमान के साथ हुई थी वही गल्ती चीन के साथ हुई । एशिया में हमने दो दुश्मन खड़े किए और दोनों को हमने भाई-भाई कहा था । इस भाई-भाई की फिलासफी मैं कहीं कोई बुनियादी भूल है और इस फिलासफी के लिए गांधी जिम्मेदार हैं । तो मैंने पत्रकारों को कहा था कि हमें सोचना चाहिए कि गांधी इतने बड़े व्यक्ति हैं कि उनकी छोटी सी भूल भी बहुत बड़ी सिद्ध हो सकती है जो हजारों साल के लिए प्रभावित कर सकती है । **हिन्दुस्थान को एक नेतृत्व चाहिए अब जो न हिन्दू हो न मुसलमान हो, न जैन हो, न जो बंगाली हो, न मद्रासी हो, न उत्तर प्रदेशी हो** । हिन्दुस्तान को नेतृत्व चाहिए जो हिन्दी भाषी न हो, तामिल भाषी न हो जो दावा न करता हो हिन्दी ही जो दावा न करता हो अंगेजी ही । जी दावा पूरे मुल्क का विचार करके करता हो, किसी एक हिस्से का विचार न करता हो । क्योंकि एक हिस्से के विचार ने हिन्दुस्तान के दो टुकड़े करवाए । अब और इस तरह के विचार हिन्दुस्तान को अनेक टुकड़ों में तोड़ डाल सकते हैं । और हिन्दुस्तान करीब-करीब टूट गया है । मुशकिल है अब इस जोड़ को बिठाना । इस जोड़ को बिठाना बहुत मुश्किल साबित होगा । भाषा वार प्रान्त तोड़ दिए । पूरे हिन्दुस्तान की हमने कोई फिक्र न की । एक-एक भाषावार प्रान्त की फिकर की, अब मंहगा हो गया है मामला । अब एक-एक भाषावार प्रांत एक-एक पाकिस्तान सिद्ध हो सकता है । जो हो गया वह सवाल नहीं है । आगे फिर ये पुनरुक्ति रोज-रोज होती चली जायेगी । पीछे लौट के देखना जरूरी है । गांधी के पचास वर्षों की कहानी इस हिन्दुस्तान के लिए

हजारों वर्षों तक मूल्यवान रहेगी। न पचास वर्ष में हमें फिर से गौर कर करके देख लेना जरूरी है कि हमने क्या भूलें दोहराई। हमने कौन सी गल्तियाँ की, कि आगे हमसे न हों। फिर यह भी जानना जरूरी है कि कोई कितना भी बड़ा महापुरुष हो। दुनिया में न कोई पूर्ण पुरुष हुआ है न हो सकता है। सच तो यह है कि जो पूर्ण हो जाते हैं वे मोक्ष चले जाते हैं शायद वे दुनिया में वापस नहीं आते। दुनिया में जो आता हैं वह अपूर्ण होता है इसीलिए आता है। अपूर्ण पुरुष—महान् से महान् व्यक्ति भी अपूर्ण होता है। उसकी अपूर्णता पर ध्यान न हो और हम पूरे मनुष्य को स्वीकार कर लें तो हम बहुत मंहगाइयों में भी पड़ सकते हैं। बहुत मंहगा सौदा हो सकता है।

गांधी के कुछ अपने Fad थे, गांधी के कुछ अपने रूझान थे। सभी महापुरुषों के होते हैं। मार्क्स जितनी देर किताब लिखता उतनी देर मुँह में सिगरेट पीता रहता। लेकिन मार्क्स कितना ही बड़ा आदमी हो, उसका सिगरेट पीना बड़ा नहीं हो जाता। और किसी को मार्क्सवादी होना हो तो चौबीस घन्टे सिगरेट पीने की जरूरत नहीं है। लेकिन कम्युनिस्ट सिगरेट पीते हैं। शायद इसी ख्याल से पीते हों कि मार्क्स बहुत सिगरेट पीता था। कहते हैं—मार्क्स ने अपनी Capital नाम की किताब लिखी तो जितनी सिगरेट पी डाली केपिटल के बिकने पर उतनी सिगरेट के दाम भी नहीं आए। लेकिन सिगरेट पीना मार्क्स का अपना व्यक्तिगत रूझान हो सकता है। इसका कोई अनुकरण करने की जरूरत नहीं है। गांधी के बहुत से व्यक्तिगत रूझान थे, जो गांधीवादी फिलासफी का हिस्सा बन गए हैं। जैसे गाँधी को हाथ से काती गई चीजों से बड़ा प्रेम था, कोई हर्जा नहीं है। किसी आदमी को हो सकता है। किसी आदमी को हाथ से काती गई चीज पसन्द हो सकती है, इसमें कोई भी हर्जा नहीं है। लेकिन आने वाली दुनिया में चरखे और तकली को बहुत मूल्य देना आत्मघाती है, Suicidal है। मुल्क मर जायेगा। दुनिया विकसित हो रही है विराट से विराट Technology की तरफ, तकनीक की तरफ और हम जो बातें कर रहे हैं पाँच हजार साल पिछले जमाने की बातें हैं। पांच हजार साल पहले तकली और चरखा इजाद हुए होंगे। तब वे सबसे बड़े यंत्र थे। अब वे सबसे बड़े यंत्र नहीं हैं। और एक आदमी अगर अपने साल भर का कपड़ा भी बनाना चाहे तो दिन में तीन-चार घन्टे चर्खा कातना पड़ेगा। तब कहीं अपने लायक पूरा कपड़ा एक आदमी तैयार कर सकेगा। एक आदमी की जिन्दगी का रोज चार घंटे का हिस्सा कपड़े पर खर्च करवा देना निहायत अन्याय है। क्योंकि हमें पता नहीं कि अगर एक आदमी को ६० साल जीना है तो २० साल तो सोने में गुजर जाते हैं। रोज आठ घण्टें तो आदमी सोता है। २० साल तो नींद में चले गए। खाने में, कमाने में और २० साल चले जाते हैं। २० साल बचते हैं आदमी के पास मुश्किल से। कुछ बचपन का हिस्सा निकल जाता है कुछ बुढ़ापे का हिस्सा निकल जाता है। और अगर हम एक आदमी के पास देखें तो मुश्किल से जीने के लिए, जिसको हम कहें ठीक से जीने के लिए, पूर्ण सुविधा का समय पूरे जीवन में ६० साल के, पाँच साल से ज्यादा नहीं होता एक आदमी के पास। इस पांच साल के लिए तुम उससे कहो कि चप्पल भी तुम अपनी बनाओ, कपड़ा भी तुम अपना बनाओ खाना भी तुम अपना बनाओ गेहूं भी अपना पैदा कर लो, स्वावलम्बी हो जाओ। आदमी की हत्या करने के सुझाव देना है। मुझे यह स्वीकार नहीं मालूम होता। मेरी समझ यह है—कि आज तक जगत में संस्कृति, धर्म, काव्य, चित्र, संगीत जो कुछ भी पैदा हुआ है, वह उन लोगों से हुआ है जो Leisure में थे, विश्राम में थे। जिसका २४ घण्टे काम में व्यतीत हो जाता है उससे न संगीत पैदा होता, न काव्य पैदा होता, न संस्कृति पैदा होती, न धर्म पैदा होता है। अब तक जगत में जो श्रेष्ठतम विकास हुआ है मनुष्य संस्कृति का, वह विश्राम के क्षणों में हुआ है। वे ही कौमें और वे ही युग संस्कृति को जन्म देते हैं जो विश्राम में होते हैं, जैसे एथेन्स ने सुकरात को, प्लेटो को, अरस्तू को जन्म दिया। क्योंकि एथेन्स बहुत सम्पन्न था। वहाँ सारा काम गुलाम कर रहे थे और ऊपर का वर्ग कोई भी काम नहीं

कर रहा था। इसलिए अरस्तू पैदा हुआ, सुकरात पैदा हुआ, प्लेटो पैदा हुआ। हिन्दुस्तान ने बुद्ध और महावीर जैसे लोग पैदा किए, कृष्ण और राम जैसे। ये सब Leisure class के लोग थे। ये लोग अभिजात वर्ग के लोग थे जिनके ऊपर कोई काम नहीं था। हिन्दुस्तान के इतिहास को अगर हम उठा कर देखें तो सारे ग्रन्थ ब्राह्मणों ने लिखे जिनके पास कोई काम नहीं था। हिन्दुस्तान के सारे धर्म को जन्म ब्राह्मणों ने दिया। उनके पास कोई काम नहीं था, हमने उन्हें काम से मुक्त कर दिया था। हमने कहा था तुम्हें कोई काम नहीं, तुम पढ़ो, लिखो, सोचो-विचारो। शूद्रों ने तो एक वेद नहीं लिखा, एक उपनिषद् नहीं लिखा। शूद्र कैसे लिख सकते थे। पूरे हिन्दुस्तान के इतिहास में एक बुद्धिमान शूद्र पैदा हुआ, वह भी अंग्रेजों की बदौलत डा० अम्बेदकर। उसके पहले कोई शूद्र पैदा नहीं हुआ। नहीं हो सकता था। कोई कारण नहीं। उसको चौबीस घण्टे हमने काम में उलझा दिया है। अगर स्वावलम्बन की बात को बहुत ज्यादा खींचा जाय तो एक एक आदमी की जिन्दगी सुबह से शाम तक, फिजूल कामों में नष्ट हो जायेगी और उसके व्यक्तित्व में ऊपर उठने के कोई उपाय नहीं रह जाते। अगर व्यक्ति की चेतना को ऊपर उठाना है, तो समाज में अधिकतम विश्राम हो सके इसकी चिन्ता करनी चाहिये।

वह कैसे होगा? विश्राम होगा—यदि मनुष्य का काम यन्त्रों के हाथ में चला जावे तो। जब तक गुलाम थे दुनिया में, तो गुलाम श्रम करते थे मालिक विश्राम करता था। वह अन्याय पूर्ण था क्योंकि गुलामों की आत्मा को विकसित होने का मौका नहीं मिलता था। किसी आदमी को हक नहीं है कि वह दूसरे व्यक्ति की आत्मा की कीमत पर अपनी आत्मा को विकसित करे। यह अन्याय है। यह सीधा पाप है। लेकिन विज्ञान ने एक बड़ा भारी उपकार किया मनुष्य के ऊपर, आदमी का काम यन्त्र कर सकता है। आदमी को काम में गुलाम बनाने की अब कोई जरूरत नहीं रह गई। नई Technology सारा काम कर लेगी। आने वाले ५० वर्षों में अमरीका और रूस में किसी आदमी के ऊपर किसी तरह का अनिवार्य श्रम नहीं रह जावेगा। जिस दिन पूरा समाज श्रम से मुक्त हो सकेगा। उस दिन हम कितनी बड़ी संस्कृति को, कितने महान् धर्म को, कितने बड़े काव्य को, कितने बड़े साहित्य को जन्म दे सकेंगे। इसकी आज कल्पना करनी भी मुश्किल है। गांधी की स्वावलम्बन की बात अवैज्ञानिक है और यह भी ध्यान रहे कि आदमी जितना स्वावलम्बी होता है, उतना ही समाज दरिद्र होता है। आदमी जितना परस्पर आश्रित होता है, समाज उतना समृद्ध होता है। आप चश्मा पहने हुए हैं वह चश्मा कलकत्ते में बना होगा। आप जूता पहने हुए हैं वह जूता कानपुर में बना होगा। आप कोट पहने हुए हैं उसका कपड़ा बम्बई में तैयार हुआ होगा। आपका अगर सारी चीजें उठाकर देखी जायें तो आप पायेंगे कि पूरे मुल्क का उसमें हाथ है, पूरी दुनिया का भी हो सकता है। आपकी चीजें सारी दुनिया से आई हैं। आप सब पर निर्भर हैं सब आप पर निर्भर हैं। इसी से दुनिया में एक Unity खड़ी होती है। जितना स्वावलम्बी व्यक्ति होता है, उतना ही समाज से असम्बन्धित हो जाता है। हिन्दुस्तान इतने दिनों तक राष्ट्र नहीं बन सका Nation नहीं बन सका। उसका बुनियादी कारण मेरी दृष्टि में यह है कि हिन्दुस्तान पांच हजार वर्षों से एक-एक व्यक्ति करीब-करीब स्वावलम्बी होने की चेष्टा में जी रहा है। एक किसान अपनी खेती-बाड़ी से पैदा कर लेता है। एक गांव का अपना लुहार भी है, उसका अपना चमार भी है। गाँव की दूसरे गांव पर निर्भर रहने की जरूरत नहीं हैं। हिन्दुस्तान के सारे गाँव स्वावलम्बी थे। इसलिये हिन्दुस्तान राष्ट्र नहीं बन सका। क्योंकि जब हम स्वावलम्बी हैं और बगल के गांव पर हमला हुआ तो हमारा गांव सोचता है कि हमें क्या प्रयोजन है। दूसरा लड़ रहा है लड़ेगा। अगर हिन्दुस्तान एक दूसरे पर पूरी तरह निर्भर हो जायेगा तो ही हिन्दुस्तान एक राष्ट्र बनेगा। और जिस दिन दुनिया पूरी निर्भर हो जायेगी एक दूसरे पर दुनिया में युद्ध बन्द हो जायेंगे। अहिंसा से युद्ध बन्द होने वाले नहीं हैं। जिस दिन Technology सारी

दुनिया को एक दूसरे पर निर्भर कर देगी। उस दिन युद्ध बन्द हो जायेंगे। उसके बाद युद्ध की कोई सम्भावना नहीं है। आज रूस, अमरीका से युद्ध करने में असमर्थ होता जा रहा है। पता है आपको किसलिए ? इसलिए नहीं कि रूस के मन में कोई शाँति की बड़ी कामना पैदा हो गई। बल्कि इसलिए कि आज चार वर्षों से रूस को गेहूं के लिए अमरीका और कनाडा पर निर्भर रहना पड़ रहा है। और आने वाले १० वर्षों में उसको अमेरिका से गेहूं लेना पड़ेगा। उसके बिना और कोई रास्ता नहीं है। जिससे गेहूं लेना है, भोजन लेना है, उनसे युद्ध नहीं किया जा सकता। मेरी कल्पना में ये दुनिया एक हो सकती है अगर दुनिया में तीव्रतम केन्द्रीयकरण हो, Centralisation हो। इतना केन्द्रीयकरण होना चाहिए कि एक गांव एक ही चीज पैदा करे। सारे गांव को हजार तरह की चीजें पैदा करने की जरूरत नहीं है। अगर बम्बई में कपड़ा अच्छा बन सकता है तो सारे हिन्दुस्तान में अलग-अलग मिलें बनाने का कोई जरूरत नहीं है। यह उचित होगा कि बम्बई सिर्फ कपड़े पैदा करे और कुछ भी पैदा न करे। क्योंकि तब सर्व-सामान्य बम्बई में कुशलता पैदा हो जायेगी। बच्चे जन्म के साथ कपड़ा बनाने में समर्थ पैदा होंगे। बम्बई का एक-एक आदमी कुशल हो जायेगा। कपड़े के सारे Expert, सारे विशेषज्ञ वहाँ इकट्ठे हो जावेंगे। नई-नई खोज करने वाले रिसर्च के लोग वहां इकट्ठे हो जावेंगे। सारे हिन्दुस्तान के कपड़े के जानकार वहां इकट्ठे होंगे। हम श्रेष्ठतम कपड़ा पैदा कर सकेंगे और कम से कम श्रम में पैदा कर सकेंगे और सारे मुल्क को दे सकेंगे। जो गांव जूते बनाता है वह सिर्फ जूते बनाए। एक-एक गाँव में अलग-अलग जूते बनाना नासमझी की बात है। सच तो यह है कि अगर Centralisation ठीक से हो तो दुनिया की दरिद्रता मिट सकती है और दुनिया का बहुत सा समय जो व्यर्थ नष्ट होता है बच सकता है। हर घर में चूल्हा जलता है यह पागलपन की बात है। अगर वैज्ञानिक दुनिया होगी तो एक मुहल्ले का एक Kitchen होना चाहिए, जहाँ १० औरतें काम करेंगी। अभी हजार औरतें रोज दिन भर काम कर रही हैं समय पूरा का पूरा व्यर्थ हो रहा है अपव्यय हो रहा है। एक मुहल्ले का एक किचिन होना चाहिए, जहाँ १०० औरतें काम करेंगी ९०० औरतें मुक्त हो जायेंगी। उन सब औरतों से और सब दूसरे काम लिए जा सकते हैं। उनसे शिक्षा का काम लिया जा सकता है, उनसे बच्चे पालने की व्यवस्था की जा सकती है। ये समाज का हजार काम कर सकती हैं। लेकिन **आधा हिन्दुस्तान सिर्फ रोटी बना रहा है। कुछ भी नहीं कर रहा है। आधा मुल्क सिर्फ रोटी बनाने में व्यतीत हो जाय। थोड़ी हैरानी की बात मालूम होती है हमारे सोचने का अवैज्ञानिक ढंग है आधा हिन्दुस्तान सिर्फ रोटी बनायेगा। आधा हिन्दुस्तान कुछ और नहीं करेगा, तो यह देश कभी समृद्ध नहीं हो सकता।** इस देश को समृद्ध बनाना हो तो यह मामला वैसा ही है जैसे कि पुराने रईसों के घर थे तो रईसों के लड़कों को एक-एक मास्टर लगा दिया जाता था। एक लड़का है एक शिक्षक पढ़ा रहा है। अवैज्ञानिक थी यह बात, इसमें बहुत लोग शिक्षित नहीं हो सकते थे। आज एक शिक्षक है और ३० लड़के पढ़ रहे हैं। हमको समझ में आता है यह केन्द्रित व्यवस्था हो गई। रईस के घर में Tuitor पढ़ाता है। एक मास्टर है एक बच्चा है, ज्यादा बड़ा रईस है तो चार मास्टर हैं एक बच्चा है। लेकिन हम समझ गए इस भांति तो दुनिया को शिक्षित नहीं किया जा सकता। ३० बच्चे और एक शिक्षक होना चाहिए। तो हमने Scientific कर दी शिक्षा को। स्कूल की एक क्लास खोल दी, हर घर में क्लास बनाने की जरूरत नहीं है। मुहल्ले को एक स्कूल है, उस स्कूल में मुहल्ले के सारे बच्चे पढ़ते हैं। चार शिक्षक, आठ शिक्षक उस कार्य को निपटा देते हैं। अगर एक-एक बच्चे को एक-एक शिक्षक निपटाने जाय – तो ठीक है हो गया मुल्क का काम। शिक्षा ही पूरी हो जाये तो वही बहुत है। आज हम दूसरी चीजों में उतने ही अवैज्ञानिक हैं। एक-एक घर में चौका इस बात का सबूत देता है कि हमारी बुद्धि में समझ, गणित बहुत कम है। अगर समझदारी होगी तो ठीक है १०-२५ घरों के बीच में एक चौका होना चाहिए।

१०-५ महिलायें उसमें काम करेंगी। जो श्रेष्ठतम भोजन बना सकती हैं बनायें। अब १००० औरतें बनाती हैं जिनमें ९०० को भोजन बनाने की कोई अक्ल, कोई तमीज़ नहीं है। उनकी कोई जरुरत नहीं है। वे दूसरा काम शायद बेहतर कर सकें। उनको वह काम मिलना चाहिए। गांधी जी के स्वावलबंन के विचार से मैं बिल्कुल भी सहमत नहीं हूं। बिल्कुल अवैज्ञानिक है वह बात। परावलंबन चाहिए। जितने हम परावलम्बी होते हैं, समाज में उतनी एकता बढ़ती है।

शायद आपको पता नहीं हिंदुस्तान में अगर हिन्दू और मुसलमानों के बीच शादी विवाह होता, तो पाकिस्तान कभी भी नहीं बँटता। क्योंकि हम एक दूसरे पर निर्भर हो जाते। निर्भर होने पर दंगा होना मुश्किल हो जाता। चीन में कभी कोई धर्मिक दंगे नहीं हुए आज तक। उसका कुल एक कारण है कि एक-एक घर में तीन-तीन, चार-चार धर्मों के लोग हैं, दंगा कैसे हो सकता है। पत्नी मुसलमान है, पति बौद्ध है, बाप कन्फ्यूसियन है, माँ लाओत्स को मानती है। चारों चार अलग मन्दिरों में जाते हैं, झगड़ा कैसे होगा। चारों मन्दिरों में झगड़ा होगा तो घर में छुरे बाजी करनी पड़ेगी। चीन में कोई धार्मिक दंगा नहीं हो सका ३००० वर्षों के इतिहास में। उसका कुल एक कारण है कि चीन के धर्म परस्पर निर्भर हैं। हिन्दुस्तान में झगड़ा हो सका। झगड़ा इसलिए हो सका कि हिन्दु बिल्कुल अलग है मुसलमान बिल्कुल अलग हैं। कोई उनमें नाता नहीं है, कोई गहरा सम्बन्ध नहीं है। **अगर हिन्दुस्तान में हिन्दू और मुसलमानों के दंगे और बेवकूफियां मिटानी हैं तो ये स्वावलंबन बन्द करना पड़ेगा कि हम हिन्दू के भीतर ही शादी करेंगे। कि हम मुसलमान के भीतर ही शादी करेंगे।** आने वाले बच्चों को ख्याल रखना चाहिए कि हिन्दुस्तान की एकता तुम्हारे विवाह पर निर्भर करेगी। तुममें थोड़ी भी समझ है तो भूल कर भी हिन्दू कभी हिन्दू घर में शादी मत करना, जैन कभी जैन घर में शादी मत करना। यह हिन्दुस्तान मर जावेगा अगर जैन ने जैन के घर में शादी की। मुसलमान ने मुसलमान के घर में शादी की। हिन्दुस्तान नहीं बच सकता अब। क्योंकि जैसे ही हम एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं वैसे ही हम एक दूसरे के शत्रु नहीं रह जाते। **निर्भरता--एक दूसरे से गहरे सम्बन्ध हमारे बीच से वैमनस्यता को समाप्त कर देते हैं।** हिन्दुस्तान में गांधी जी ने जो बात कही, वह हमारी हजारों साल की परम्परा से अनुमोदित है। हजारों सालों से हमारा यह ख्याल रहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वावलंबी होना चाहिए। अपना काम खुद कर लेना चाहिए। जहाँ तक बने किसी पर निर्भर नहीं होना चाहिए। ये सारी की सारी बातें अहंकार पूर्ण हैं, Egoism से भरी हुई हैं। क्यों निर्भर नहीं होना चाहिए किसी पर? दूसरा आदमी दुश्मन है और निर्भरता तो Mutual है, पारस्परिक है। जब मैं दूसरे पर निर्भर होता हूं, दूसरा मुझ पर निर्भर होता है। जब हम एक दूसरे पर निर्भर होते हैं तो जो काम हजार आदमी करते हैं, वह काम सौ आदमी कर लेते हैं। नौ सौ आदमियों का श्रम मुक्त हो जाता है। अब आप थोड़ा सोचिये कि आप घर में साबुन भी बनायें, टुथ-पेस्ट भी बनायें, जूता भी सियें, कपड़े भी बनायें तो आप दरिद्रतम आदमी होंगे दुनिया के। रद्दी से रद्दी कपड़े पहिनने पड़ेगें। खराब से खराब जूते पहिनने पड़ेंगे। आपको पता नहीं है कि एक लक्स-टायलेट आप खरीदते हैं, उतने बड़े पैमाने पर पैदा होती है लक्स, कि एक लक्स-टायलेट करीब-करीब दो पैसे में तैयार हो जाती है। आप लक्स-टायलेट घर में बनाएँ तो बाजार में अगर एक रुपये में आपको मिलती है तो दो रुपये में भी घर पर नहीं बना सकते। उतनी सुविधा, उतनी व्यवस्था उतने बड़े पैमाने पर नहीं जुटाई जा सकती। स्वावलंबन की बात फिजूल है। चाहे कपड़े का सम्बन्ध हो, चाहे साबुन का सम्बन्ध हो, चाहे भोजन का सम्बन्ध हो। समाज है, परस्पर निर्भरता, समाज का अर्थ ही क्या है? समाज के Concept का मतलब क्या है। जिस समाज में सारे लोग स्वावलम्बी हों, वह समाज है ही नहीं। समाज का मतलब क्या होता है। समाज का मतलब होता है परस्पर निर्भर लोग, परस्पर निर्भरता से बंधे हुए लोग। यदि गांधी के स्वावलम्बन को बात मानी जाती

है तो हिन्दुस्तान में समाज विकसित ही नहीं हो सकेगा। और हिन्दुस्तान में आज तक समाज विकसित नहीं हो सका। नहीं होने का कारण था कि हिन्दुस्तान के छोटे-छोटे Unit, Independent थे। एक गांव था, उसे कोई फिक्र नहीं कि दिल्ली किसके हाथ में है। मुसलमान के हाथ में है कि हिन्दु के हाथ में है, कि मुगल हैं, कि तुर्क हैं कि कौन हैं। उसे कोई मतलब नहीं गांव को पता ही नहीं चलता था और हुकूमतें बदल जाती थीं दिल्ली को। क्योंकि गांव का कोई सम्बन्ध दिल्ली से नहीं था। दिल्ली में हुकूमत बदल गई, बीस साल बाद गांव में पता चलेगा कि मालूम होता है—दूसरा राजा आ गया।

लाओत्से ने लिखा है—३००० साल पहले चीन के एक गांव का किस्सा लिखा है। मेरे पिता और मेरे बुजुर्ग कहते थे कि हमारे गांव के पास एक नदी बहती है। उसके उस तरफ कोई गांव है। शाम को उस गांव का धुंआ दिखाई पड़ता है। रात में उसके कुत्ते भोंकते हुए सुनाई पड़ते हैं। लेकिन हमसे उनका कोई सम्बन्ध नहीं इसलिये न कोई नदी के उस पार गया और न उधर से कोई इधर आया। सुनाई पड़ता है कि उस तरफ लोग जरूर रहते होंगे, क्योंकि रात को कुत्ते भोंकते हैं, कभी-कभी सांझ को धुंआ दिखाई देता है। होंगे लोग वहां पर कोई सम्बन्ध नहीं है। क्या जरूरत है वहां जाने की ?

हिन्दुस्तान इसीलिए हिन्दुस्तान के बाहर नहीं गया। हिन्दुस्तान का हिन्दुस्तान के बाहर न जाना बहुत मँहगा पड़ गया। हम एक कुएँ में बन्द लोग हो गए। हजारों साल तक हमें पता भी नहीं था कि बाहर एक बड़ी दुनिया भी है। अब फिर अगर हमें स्वावलम्बन की बात कही जाती है तो हमने जो भूल हजारों साल तक दोहराई है, हम फिर दोहरा लेंगे। आपको पता है—कि हिन्दुस्तान ने आज से कोई दस हजार साल पहले गाड़ी का चाक खोज लिया होगा। गाड़ा के चाक की खोज के बाद, हवाई जहाज बना लेने में कोई वैज्ञानिक तकनीकी उपद्रव नहीं है। चाक ही सब कुछ है। एक दफा हमने घूमता हुआ चाक खोज लिया तो बड़ी से बड़ी मशीन खोज सकते हैं। क्योंकि आधार-भूत नियम वह चका है। लेकिन हम गाड़ी पर ही चलते रहते हैं हमने कुछ और नहीं खोजा। दूसरे मुल्क अंतरिक्ष-यान बना लिये हैं। और हम ? हमने सोचा जरूरत क्या है। अपनी जितनी छोटी सी चादर है उसके अन्दर ही पैर सिकोड़कर सोये रहना चाहिए। चादर के बाहर पैर कभी नहीं निकालना चाहिए। बैलगाड़ी है तो बैलगाड़ी से चलो। तकली है तो तकली चलाओ। लेकिन फैलाओ मत क्योंकि फैलाने में, फैलाने में झंझट बढ़ सकती है, जटिलता बढ़ती है। क्या जरूरत है ? जरूरतें कम रखो। **हिन्दुस्तान की पूरी फिलासफी एक शब्द में कही जा सकती है। "जरूरतें कम रखो।" चादर के भीतर पैर, रखो। इस फिलासफी ने हिन्दुस्तान को दरिद्र बनाया, दुखी बनाया, दीन बनाया, दास बनाया।** क्योंकि जब हम चादर के बाहर पैर न फैलायेंगे। और पैरों को सर्दी और गर्मी नहीं लगेगी, तब चादर को बड़ा करने का सवाल ही कब उठेगा। चादर को बड़ा करने का सवाल तब उठता है जब जरूरत पैदा हो जाती है। जरूरत जन्म बनती है आविष्कार की। हम कहते हैं-जरूरतें कम रखो इसलिए आविष्कार करने की कोई जरूरत नहीं पड़ती। जरूरत जब पैदा होती है, तब अविष्कार होता है। हिन्दुस्तान ने कोई आविष्कार नहीं किया उसका कारण ? हिन्दुस्तान के पास प्रतिभा की कमी है। हिन्दुस्तान के पास इतने प्रतिभाशाली लोग पैदा हुए। बुद्ध, महावीर, कोणार्क, गौतम,—क्या मुकाबला है दुनिया में इनका। शंकर, नागार्जुन—कौन है इनकी चोटी का विचारक इस दुनिया में। लेकिन एक आंइस्टीन पैदा नहीं हुआ, एक न्यूटन पैदा नहीं हुआ। क्यों ? क्योंकि हमारी बुनियादी धारणायें यह रही, कि आवश्यकता कम होनी चाहिए तो ही आदमी सुखी रह सकता है। और देख रहे है हम भलीभाँति कि पांच हजार सालों से आवश्यकताएं कम हैं—कौन सा आदमी सुखी है हिन्दुस्तान में। पांच हजार साल के अभ्यास के बाद कौन सा आदमी सुखी है हिन्दुस्तान में। जो हम कहते हैं—कि आवश्यकताएं कम हों तो आदमी सुखी रह सकता है। नहीं ! न आवश्यकताओं के कम होने से सुख का सम्बन्ध

है न ज्यादा होने से। सुख एक बात ही अलग है। उसकी खोज आवश्यकता कम हो तो भी करना पड़ती है। लेकिन आवश्यकताएं ज्यादा होने से सम्पदा बढ़ती है। आवश्यकता ज्यादा होने से तकनीक बढ़ता है आवश्यकताएँ ज्यादा होने से मनुष्य को कम श्रम करना पड़ता है, ज्यादा विश्राम मिलता है। **आवश्यकताएं ज्यादा होने से ज्यादा आविष्कार होते हैं, विज्ञान होता है, शक्ति बढ़ती है, सामर्थ्य बढ़ती है।** हिन्दुस्तान की सामर्थ्य नहीं बढ़ सकी। अब गांधी जी फिर वही कहते हैं आवश्यकताएं कम। वह बात हमें बिल्कुल समझ में आती है क्योंकि गांधी हमारे पांच हजार साल के प्रतिनिधि हैं। हमने जो पांच हजार सालों से सुना है उसे वे फिर से कह रहे हैं इसलिए बिल्कुल समझ में बात आती है। लेकिन वह बात मंहगी पड़ी है और अगर हम आगे भी उसको दोहराते हैं तो अब तक तो हम जी भी लिए, आगे तो हम जी भी नहीं सकेंगे। क्योंकि हिन्दुस्तान की आबादी बुद्ध के जमाने में दो करोड़ थी। आज हिन्दुस्तान की आबादी बावन करोड़ है। पचास करोड़ लोग बढ़ गये हैं और हिन्दुस्तान की बुद्धि, बुद्ध के जमाने की है, उसमें कोई बढ़ती नहीं हुई है। यह बड़ी घबड़ाने वाली बात है। हमारे उपकरण, हमारे साधन, खेती-बाड़ी का हमारा ढंग बुद्ध के जमाने का है। उसमें कोई फर्क नहीं हुआ है। किसान जैसा आज खेत पर काम कर रहा है, ठीक वैसा ही बुद्ध के जमाने में भी था। उसके उपकरणों में कोई वृद्धि नहीं हुई और पचास करोड़ की संख्या बढ़ गई। और आने वाले २० वर्षों में यह संख्या रोज बढ़ती चली जायेगी, रोज बढ़ती जायेगी। इस सदी के पूरे होते-होते हिन्दुस्तान में एक अरब लोगों के होने की संभावना हो गई है। और विचारक कहते हैं कि १९७८ में इतने बड़े अकाल की संभावना है हिन्दुस्तान में, जिसमें दस करोड़ से लेकर बीस करोड़ लोगों को मरना पड़ सकता है। लेकिन हम कहते हैं कि हम केन्द्रीयकरण नहीं करेंगे। हम कहते हैं कि हम उद्योगीकरण नहीं करेंगे। तो फिर मरेंगे २० करोड़ लोग १९७८ तक। और जब २० करोड़ लोगों को किसी मुल्क में मरना पड़े तो, बाकी जो जिन्दा रह जायेंगे, वो जिन्दा हालत में रहेंगे। अगर २० करोड़ आदमियों को मरना पड़े किसी मुल्क में, हर तीन आदमी में एक आदमी मर जाय तो आप सोचते हैं जो दो आदमी बचेंगे उनकी क्या हालत हो जायेगी? उनकी हालत मरों से बदतर हो जायेगी। और २० करोड़ लोग तीव्रता से मरें मुल्क में, तो लाशें फेंकना मुश्किल हो जावेगा। लेकिन गांधीजी का विचार हिन्दुस्तान को समृद्ध नहीं बना सकता। क्योंकि वे कहते हैं छोटे उपकरण चाहिए। हाथ से चलने वाले उपकरण चाहिए ग्रामोद्योग चाहिए। घर-घर का धन्धा चाहिए। इससे काम नहीं चलेगा। खेती को भी Industrialise करना होगा। Industrial Agriculture चाहिए। **अब खेती छोटे-छोटे टुकड़ों में और एक-एक किसान अपने अपने टुकड़ों में करे यह नहीं चल सकता है।** एक गांव का एक ही खेत चाहिए। और एक गांव के खेत पर नई से नई मशीनें, नए उपकरण, नए यंत्र चाहिये। मजा यह है कि एक गांव में एक हजार किसान हैं और उन एक हजार किसानों के हल-बखर बेच दिए जायें, तो एक ट्रेक्टर उससे आ सकता है और एक ट्रेक्टर से सारा काम हो सकता है। ये हजार हल बखर और ये दो हजार बैल, इन सबका खर्च, इन सबकी परेशानी, ये सब हमें खाए जा रहे हैं। हिन्दुस्तान को चाहिए 'केन्द्रित औद्योगिक व्यवस्था' हिन्दुस्तान को चाहिए Centralise Industrial Agriculture केन्द्रित औद्योगिक कृषि। एक-एक आदमी के हाथ में नहीं दिया जा सकता है अब मामला। उससे कुछ होने वाला नहीं है अब। हम मर जायेंगे, अब हम जी नहीं सकते। देख रहे हैं कि आजादी के बाद रोज हमें भीख मांग कर जीना पड़ रहा है। अगर अमरीका हमें गेहूं न दे तो आज मर जायें, इसी वक्त। हमारी जीने की हैसियत क्या है। हम माँग कर खा रहे हैं और भूल गए हैं। जैसे कोई असुविधा नहीं है। अमरीका में जो चार किसान उत्पादन कर रहे हैं, उसमें से एक किसान का उत्पादन हम खा रहे हैं। अमरीका का विचारक कह रहा है, हम और ज्यादा से ज्यादा दस साल खींच सकते हैं। इसके बाद तो हमारी अर्थ व्यवस्था टूट जायेगी हिन्दुस्तान को

पालने में। यह नहीं चल सकता। लेकिन हम निश्चित हैं। हमें कोई ख्याल नहीं। हम बैठ के क्या बातें कर रहे हैं? हम बात कर रहे हैं कि तकली चलाने से बड़ी आध्यात्मिकता आती है। कि चर्खा चलाने से आदमी बड़ा सात्विक और पवित्र हो जाता है। जय जय गान कर रहे हैं, किन बातों का? गांधी के Fad का। गांधी को झुकाव था, लगाव था इस बात का, ठीक है। गांधी को मौज है। उन्हें जो ठीक लगे वो करें। और जिसको भी ठीक लगता हो वह करे। लेकिन पूरे मुल्क को सोचना पड़ेगा कि हम इन बातों से राजी होते हैं तो उसका परिणाम क्या होगा। फिर शायद आपको मालूम नहीं कि जितना मनुष्य का तकनीक विकसित होगा, उतनी ही मनुष्य की चेतना विकसित होती है। **आदिवासियों में जाइए—एकाध बर्टेन्ड रसल एकाध नेहरू मिल सकता है आदिवासियों में खोजने से। क्यों आदिवासियों के पास बुद्धि नहीं है, आत्मा नहीं है!** आदिवासियों के पास एकाध गौतम बुद्ध पैदा नहीं होता। आदिवासियों के पास कोई आइंस्टीन पैदा नहीं होता। कोई तानसेन, कोई निराला, कोई रवीन्द्रनाथ कोई पैदा होता है। क्यों नहीं पैदा होता? बात क्या है? बात कुल इतनी है कि जितना उत्पादन का साधन विकसित होता है। उतनी मनुष्य की चेतना को चुनौती मिलती है। उस चुनौती से चेतना विकसित होती है। एक आदमी बैलगाड़ी चला रहा है। बैलगाड़ी चलाने में कितनी चेतना की जरूरत पड़ती है। एक आदमी हवाई जहाज चला रहा है। हवाई जहाज चलाने के लिए बहुत सचेतन होना जरूरी है। हवाई जहाज की जटिल मशीनरी के साथ व्यवहार करने के लिए, बहुत बुद्धिमानी होनी जरूरी है। हवाई जहाज को चलाने के लिए आदमी में परिवर्तन हो जावेगा। उसकी चेतना को चुनौती मिलेगी। उसकी चेतना को बदलना पड़ेगा। तो जितना जटिल यंत्र होता है उतनी ही श्रेष्ठतम चेतना को जन्म मिलता है। जितना सरल यंत्र होता है उतनी ही सामान्य चेतना को जन्म मिलता है। अभी अंतरिक्ष यानों में जो यात्री गए। उन्होंने वापस लौटकर कहा। उन्होंने कहा—अंतरिक्ष यान में जैसे ही हम प्रवेश करते हैं शून्य आकाश में, इतना सन्नाटा है वहाँ। इतना Silence है। इतना Total Silence है वहां। इतनी शांति है कि कोई ध्वनि नहीं, कोई आवाज नहीं। सिर फटने लगता है शान्ति से। आपने सुना होगा कि आवाज से सिर फटने लगता है—यह मुहावरा है। लेकिन शांति से सिर फटने लगता है यह मुहावरा कभी सुना आपने? लेकिन अंतरिक्ष से लौटे हैं जो लोग वे कहते हैं शांति से सिर फटने लगता। नर्सें जबाव देने लगती हैं। क्योंकि इतनी शांति का कोई अभ्यास नहीं है। तो आज अमरीका में और रूस में कमरे बनाए है कृत्रिम—जिनके भीतर अंतरिक्ष के जितनी शांति पैदा की है। वहाँ उनको, यात्रियों को Trained करते हैं। १५–२० मिनट में यात्री बाहर आ जाता है घबराकर कि नहीं बहुत घबड़ाहट लगती है। अब आप समझते हैं। अमरीका और रूस दोनों मुल्कों के वैज्ञानिक ध्यान में उत्सुक हुए हैं। क्योंकि वे कहते हैं कि अब ध्यान सिखाना पड़ेगा यात्रियों को ताकि वे अंतरिक्ष में सामना कर सकें सन्नाटे का, शून्य का अब इसको सोचना जरूरी है कि जब १५ मिनिट में आदमी बाहर निकल आता है घबड़ाके, तो धीरे-धीरे उसका अभ्यास चलेगा। उसे २४-२४ घंटे, दो-दो दिन फिर महीने-महीने शून्य में रहने पर उसके मस्तिष्क में बुनियादी फर्क नहीं पड़ सकता। बुनियादी फर्क हो वे जागा। जो आपके योगियों को ३०-३०, ४०-४० वर्ष की मेहनत से उपलब्ध हुआ था, वह अंतरिक्ष यान के यात्री को दो दिन में भी उपलब्ध हो सकता है। इतने शून्य का साक्षात्कार करने से चेतना में बुनियादी क्रांति हो जायेगी। और हम, कहते हैं कि हमें बहुत जटिल यंत्र नहीं चाहिए। हमें जटिल यंत्रों को विकसित नहीं करना है। डर इस बात का हो गया है कि आने वाले ५० वर्षों में अमेरिका और रूस में बिल्कुल नए किस्म के मनुष्य के जन्म होने की सम्भावना है। लेकिन हमें कोई ख्याल नहीं। हम अपनी दकियानूसी, पुरानपंथी बातों को लिऐ बैठे रहेंगे और यदि कोई कुछ कहेगा तो उसको गाली देंगे, नाराज होंगे। जबलपुर के एक कोने से लेकर दिल्ली तक, सब नाराज हो जायेंगे। कोई सोचने विचारने को राजी नहीं होगा। अभी मैं सौराष्ट्र में था।

मेरे खिलाफ मोरार जी भाई ने वक्तव्य दिया और मोरार जी भाई ने कहा कि मैं (आचार्य श्री रजनीश) ऐसी बातें कह रहा हूं जो मुझे नहीं कहनी चाहिए—एक आध्यात्मिक आदमी को गांधी जी की आलोचना ही नहीं करनी चाहिए। मैंने कहा—आध्यात्मिक व्यक्ति होना क्या कोई पाप है। मोरार जी भाई कहते हैं—आध्यात्मिक व्यक्ति को आलोचना ही नहीं करनी चाहिए गांधी जी की। अब तक तो राजनीतिज्ञ और अर्थ-शास्त्री आलोचना करते थे, अब आध्यात्मिक व्यक्ति आलोचना करने लगे। मैं मोरार जी भाई को कहना चाहता हूं कि गांधी जी को आध्यात्मिक लोग ही समझ सकते हैं राजनीतिज्ञ और आर्थिक लोग तो समझ भी नहीं सकते। क्योंकि गांधी जी मूलतः आध्यात्मिक व्यक्ति हैं—न तो राजनीतिज्ञ हैं और न ही अर्थशास्त्री हैं। दोनों नहीं हैं। राजनीति आपत्-धर्म थी उनके लिए, जरूरत आ गई थी इसलिए खड़े थे। मूलतः तो वे आध्यात्मिक व्यक्ति हैं। उन्हें आध्यात्मिक व्यक्ति नहीं समझेंगे तो कौन समझेगा। और अगर आध्यात्मिक व्यक्ति आलोचना नहीं करेंगे गाँधी की, तो फिर कौन करेगा। (गाँधी जी की सृजनात्मक आलोचना को जब एक युवक न समझ सके और उन्होंने रोश में कहा कि "आप गांधी की किसी अच्छी बात को बतायें" तब आचार्य श्री ने कहा) कि वे कह रहे हैं कि मैं गांधी जी के सम्बन्ध में कुछ अच्छी बात भी कहूं। वह मैं कहूंगा इतने घबड़ा मत जाइए, इतने परेशान मत हो जाइए। जाते-जाते एकाध अच्छी बात उनके बाबत जरूर कहूंगा जो आपके मन को अच्छी लगे।

यह जो मोरार जी भाई कहते हैं कि आध्यात्मिक व्यक्ति को आलोचना नहीं करनी चाहिए। यह बड़ी नासमझी की बात मालूम पड़ती है। शायद उनका ख्याल है कि आध्यात्मिक व्यक्ति आलोचना करते ही नहीं तो उन्हें पता नहीं है कि दयानन्द ने कितनी आलोचना की है, उन्हें पता नहीं है कि शंकराचार्य ने कितनी आलोचना की है। उन्हें पता नहीं है कि बुद्ध ने कितनी आलोचना की है। उन्हें पता नहीं है कि सारे आध्यात्म का विकास आलोचना से हुआ है। फिर गांधी तो एक आध्यात्मिक व्यक्ति हैं। गांधी के ऊपर हिन्दुस्तान के आध्यात्मिक व्यक्ति को गंभीरता से सोचना और विचार करना जरूरी है। और मेरा कहना यह है कि क्योंकि गांधी आध्यात्मिक व्यक्ति हैं इसलिये अर्थ के जगत में, राजनीति के जगत में बहुत सी भूलें कर सकते हैं। जो कि शायद कौटिल्य और मैक्यावली कभी भी न करते। काका कालेलकर ने अभी अहमदाबाद में मेरे खिलाफ एक व्यक्तव्य दिया और कहा—कि मेरी उम्र अभी कम है इसलिए मैं गड़बड़ बातें कह देता हूं। उम्र थोडी ज्यादा होगी तो फिर ठोक बातें कहने लगूँगा। मुझे वे कोई जवाब नहीं देते हैं। यह जवाब हुआ, मैं जो कहता हूं उसका यह जवाब हुआ। शंकराचार्य की उम्र—३३ वर्ष में वे खत्म हो गए तो उनकी उपनिषदों पर लिखी टीकाएँ व्यर्थ हैं, ८० साल के आदमी की ठीक होती हैं। विवेकानन्द की मृत्यु ३६ साल में हो गई तो विवेकानन्द ने जो कहा वह नासमझी से भरा होगा। जीसस-क्राइस्ट ३३ साल में सूली पर लटक गया, बड़ी गलती की जीसस-क्राइस्ट ने। अगर काका कालेलकर से वे सलाह लेते तो वे सलाह देते ८० साल जिओ। यह उम्र का सवाल है। उम्र से बुद्धिमत्ता आ जाती है। अगर उम्र से बुद्धिमत्ता आती होती, तब तो बड़ी आसान बात थी हम लोग उम्र की प्रतीक्षा करते और बुद्धिमत्ता आ जाती। उम्र से तो बुद्धिमत्ता आती दिखाई नहीं पड़ती, चालाकी और कनिंगनेस जरूर आती दिखाई देती है। गुजरात सरकार मुझे ६०० एकड़ जमीन देती थी। जिस दिन मैंने पहली दफा अहमदाबाद में गांधी जी के लिए व्यक्तव्य दिया। तो मेरे मित्र मेरे पास आए और उन्होंने कहा यह आप क्या करते हैं थोड़ा आप ठहर जाइए जमीन मिल जाने दीजिए फिर व्यक्तव्य देना चाहिए। मैंने उनसे कहा—आप अनुभवी लोग हो। आपके लिए जमीन का ज्यादा मूल्य है। मैं गैर-अनुभवी हूं। मुझे जमीन का कोई भी मूल्य नहीं है। मुझे जो ठीक लगता है वह मैं कहूंगा। **जमीन आती हो या जाती हो इसका कोई अर्थ, कोई हिसाब रखने की जरूरत नहीं है।** मैंने काका को खबर भेजी, कि वे ठीक कहते हैं। अगर मैं अनुभवी होता तो चार दिन बाद कहता, जमीन मिल जाती। और क्या था, न भी कहता

तो क्या हर्ज था। न भी कहता तो मुझे प्रशंसा ज्यादा मिलती। अभी तो निन्दा मिल रही है, गाली मिल रही हैं। क्या जरूरत थी कहने की। समझदार आदमी, अनुभवी आदमी ऐसी बातें नहीं कहते हैं। वे वैसी ही बातें कहते हैं जो सबको अच्छी लगें। सबकी प्रशंसा के पात्र बनें। लेकिन ऐसे लोग कभी भी जगत में कोई बुनियादी क्रांति करने में कभी भी समर्थ नहीं होते। मुझे गांधी से विरोध नहीं है। वे मित्र शायद घबड़ा गए। हम इतने इतने पतले टोन के बने लोग हैं कि जरा सी गर्मी में बस उबाल आ जाता है। वह घबड़ा गए, गांधी से मुझे विरोध नहीं है शायद उन्होंने सुना नहीं, मैंने कहा - गांधी जैसा आदमी इस मुल्क के इतिहास में दूसरा खोजना मुश्किल है। मेरे सिवाय शायद ही किसी आदमी ने इतनी प्रशंसा की हो। लेकिन हमारा छोटा सा दिमाग है।

छोटा सा हमारा दिमाग है वह इतनी जल्दी परेशान हो जाता है कि गांधी की जैसे अगर कोई आलोचना की गई तो गांधी का कोई अहित हुआ जाता है। यह जो हमारी मानसिक दशा है कि हम प्रशंसा सुनने के लिए आतुर होते हैं। हमें अच्छा लगता है कि हमारे महापुरुष की बड़ा कहा जा रहा है, हमारे अहंकार की बड़ी तृप्ति होती है। लेकिन उस तृप्ति से मुल्क का क्या हित होता है। यह भी मैं नहीं कह रहा हूं कि गांधी ने जो किया सभी बुरा किया। कह मैं यह रहा हूं कि सारा मुल्क तो प्रशंसा करेगा, कम से कम एक आदमी को आलोचना करने दो। हिन्दुस्तान पूरा प्रशंसा करेगा सारे लोग प्रशंसा करेंगे। खोज-खोज कर लायेंगे कि क्या-क्या अच्छा किया। कोई नहीं कहेगा कि क्या मुल्क पर, आने वाले मुल्क पर उस सबका क्या परिणाम हो सकता है। एक आदमी को कहने दो। मैं यह जानता हूं कि गांधी अगर स्वयं हों, तो आलोचना के लिए स्वागत करेंगे, जीवन भर उनकी आदत थी। वे न केवल आलोचना का स्वागत करेंगे बल्कि खुद निरन्तर अपनी आलोचना करते रहे। प्रतिवर्ष कहते रहे कि यह भूल हो गई, यह भूल हो गई, यह भूल हो गई। मरने के बाद ही कोई भूल नहीं हुई। जीते थे तब रोज बताते थे यह भूल हो गई, भूल हो गई, भूल हो गई ये भूल ...। एक अमरीकी पत्रकार ने गांधी जी के खिलाफ बहुतसी ऐसी बातें लिखीं जो सरासर झूठी थीं। लिखा कि गांधी औरतों के कन्धों पर हाथ रखकर सैर-सपाटा करते हैं। कुछ ऐसे बुद्धिमान लोग हैं कि उन्हें औरतों के सिवाय कुछ दिखाई नहीं पड़ता। अब वे गांधी की अपने लड़कों की लड़कियाँ है अपनी भतीजियाँ हैं, छोटी लड़कियां हैं जिनके कन्धों पर वे हाथ रखते थे उनकी तस्वीरें छापी, गांधी बड़े अश्लील आदमी हैं। अंग्रेज सरकार ने लाखों रुपये उस सब के प्रचार के लिए दिए। वह अमरीकी पत्रकार हिन्दुस्तान आया तो वह डरा हुआ था। वह सारे के सारे जवाब तैयार करके लाया था कि हिन्दुस्तान में पूँछताछ होगी। गांधी जी को खबर मिली तो उन्होंने अपने सेक्रेटरी को दिल्ली भेजा और उस पत्रकार को निमंत्रण दिया कि वर्धा आए बिना मत चले जाना। मुझे बड़ा दुख होगा। अमरीका में इतना बहुत कम लोग मुझे जानते हैं जितना तुम जानते हो। वह आदमी बहुत डरा। वह आदमी घबड़ाया कि कोई फांसने की चाल तो नहीं है। उसे पता नहीं, कि गांधी राजनीतिज्ञ नहीं थे, फांसना वे जानते नहीं थे। उनकी कल्पना भी नहीं थी। वह डरा हुआ वर्धा आया। वह इतना घबड़ाया हुआ है कि जैसे जाते से वही बात पूछी जायगी कि तुमने ये लिखा, तुमने वो लिखा। लेकिन दिन बीत गया गांधी ने बहुत बातें पूछीं। उसका स्वास्थ कैसा है, उसकी पत्नी कैसी है, उसके बच्चे कैसे हैं। अमरीका में और सब क्या हाल है। सब पूछा, रात आ गई वह बात नहीं हुई। दूसरा दिन हो गया और सब बातें हुईं। गीता, कुरान सब आए। दूसरे दिन विदा का वक्त आ गया। गांधी ने यह नहीं पूँछा कि तुमने मेरे बाबत् ये क्या लिखा है? वह आदमी चलते वक्त रोने लगा उसने कहा --क्या बापू आप मुझसे वह पूँछेंगे हां नहीं। गांधी ने कहा जो तुमने लिखा है तो सोच के ही लिखा होगा। तुमने लिखा है तुम इतने बुद्धिमान आदमी हो, विचार करके ही लिखा होगा। और जबसे मैंने पढ़ा मैं खुद भी सोचने लगा कि कहीं मेरे भीतर वासना तो शेष नहीं है। वर्ना यह आदमी लिखता कैसे। कहीं मेरे भीतर कोई वासना जरूर शेष होनी चाहिए, इस आदमी को पकड़ में आई है यह बात। कहीं किसी कोने में शेष होगी। ठीक ही तो है। मुझे विचार का तुमने मौका

दिया । तुमसे मेरी प्रार्थना है वहां जाकर मेरी प्रशंसा मत करने लगना । मेरी प्रशंसा करने वाले बहुत लोग हैं। थोड़े ही आलोचक हैं उनके ही आधार से मैं विकसित होता हूं । क्योंकि वे कहते हैं कि यहाँ गलत । मेरे प्रशंसक तो जय जयकार करते हैं । मुझे पता ही नहीं चल सकता कि मैं गलत भी हो सकता हूं । अगर मैं उनकी ही बातों में पड़ा रहूं तो गड्ढे में ले जायेंगे मुझे । सब अनुयायी अपने नेताओं को गड्ढे में ले जाने वाले सिद्ध होते हैं। क्योंकि जय जयकार करते हैं और अनुयायी बहुत घबड़ाता है कि जय जयकार में कोई कमी न हो जाये। लेकिन गांधी जैसे लोगों को जय जयकार से कोई फर्क नहीं पड़ता है, घबड़ाने की जरूरत नहीं है । इतने बेचैन होने की जरूरत नहीं है। मैं जो कह रहा हूं गांधी के खिलाफ नहीं कह रहा हूं—वह जो गांधी की धारणाएं है, गांधी का जो विचार है, वह इस मुल्क के लिए लागू हो सकता है या नहीं, इस सम्बन्ध में कह रहा हूं। **गांधी तो अनूठे व्यक्ति हैं, उनके विचार चाहे कितने भी गलत सिद्ध हों।** विचार उनके खत्म हो जायेंगे लेकिन गांधी की महानता खत्म होने वाली नहीं है । करांची एक Conference में गांधी थे लोगों ने काले झंडे दिखाये गांधी को और नारा लगाया गांधीवाद मुर्दाबाद । गांधी ने माइक से बोलते हुए कहा—गांधी मर जायेगा, गांधीवाद जियेगा । मैं गांधी से कहना चाहता हूं—थोड़ी भूल हो गई शब्दों में । मैं उनसे कहना चाहता हूं—गांधीवाद मर सकता है, गाँधी जियेंगे, वे नहीं मर सकते हैं । गांधी का व्यक्तित्व ऐसा अनूठा है कि वाद वाद का कोई सवाल नहीं है वह सब चला जायेगा । **लेकिन गांधी की सच्चाई, गांधी की करुणा, गांधी की अहिंसा, गांधी का प्रेम, गांधी की ईमानदारी, गांधी की सरलता जियेगी। गांधीवाद में कोई मूल्य नहीं है बहुत, लेकिन गांधी में बहुत मूल्य है ।** और यह मैं उदाहरण के लिए कहना चाहता हूं कि मार्क्स को अगर हम उठा कर देखें । मार्क्स के व्यक्तित्व में कुछ भी नहीं है, दो कौड़ी का व्यक्तित्व है लेकिन विचार बहुत कीमती हैं । मार्क्स के व्यक्तित्व में कुछ भी नहीं है, कोई कीमत की बात नहीं है लेकिन विचार उसका अनूठा है । मार्क्स का विचार जियेगा । गांधी का विचार अनूठा नहीं है । गांधी के व्यक्तित्व में बड़ी अनूठी खूबियाँ हैं । गाँधी का व्यक्तित्व जियेगा । मैं जिस समाज की कल्पना करता हूं, मैं उस समाज में गांधी जैसे व्यक्ति चाहता हूं और मार्क्स जैसा समाज चाहता हूं । अब यह मेरी मजबूरी है कि गांधी के विचार से मैं राजी नहीं हूं लेकिन इससे मैं यह भी नहीं कहता कि आप मुझसे राजी हो जायें । मैं सिर्फ इतना कहता हूं कि उनसे जो गैर राजी होने की स्थिति है वह समझ लें, सोचें, विचार करें । हो सकता है मैं गलत सिद्ध हो जाऊँ । अगर मैं गलत सिद्ध हो जाऊँ तो मेरी बातों को फेंक दें कचड़े में । लेकिन यह भी हो सकता है कि मेरी कोई बात सही सिद्ध हो सकती है । और अगर कोई बात सही हो सकती है तो सिर्फ इस भय से, कहीं गाँधी की आलोचना न हो जाये, न कहना, सारे मुल्क को गड्ढे में ले जाना है । इस मुल्क की तरफ देखें या गांधी की जय जयकार की तरफ देखते रहें । क्या करें ? इस बड़े मुल्क का भविष्य देखें या बस चुपचाप बैठकर प्रशंसा करें । बहुत हमने प्रशंसा की है हजारों साल से । हम अपने किसी महापुरुष को आलोचना कभी किए ही नहीं और इसलिये यह मुल्क इतना छोटा का छोटा रह गया है । महापुरुषों की आलोचना से मुल्क ऊपर उठते हैं । महावीर की आलोचना की कभी इस देश ने, कभी हमने बुद्ध की आलोचना की ? अब हम गांधी के साथ वही दुर्व्यवहार कर रहे हैं । वह दुर्व्यवहार यह है गांधी को भी भगवान बनाकर बिठा देना है । बस उनकी पूजा करो फूल चढ़ाओ लेकिन उनका उपयोग मत करना देश के जीवन के लिए । देश के जीवन के लिए उपयोग करना है तो सोचना पड़ेगा । गांधी को घसीटना पड़ेगा आग में लेकिन उनके भीतर बहुत कुछ सोना है वह आग में भी बच जायेगा । जो कचरा है वह तो जल ही जाना चाहिए । गांधी का है इसलिए उस कचरे को आदर देने का कोई सवाल नहीं उठता । कुछ गांधी से मुझे विरोध है ऐसी धारणा लोगों के मन में पैदा हो जाती है । गाँधीवाद से मेरा विरोध है । गाँधीवादियों से तो बहुत ज्यादा विरोध है । क्योंकि २० साल में

गाँधीवादियों ने मुल्क को नरक की यात्रा करवा दी है। और उनसे इस मुल्क को बचाना एकदम जरूरी है। लेकिन वे सारे लोग गाँधी की आड़ में गाँधीवाद को और गाँधीवादी को बचाए रखना चाहते हैं कि गांधी का जोर से शोरगुल मचा के वे यह भ्राँति मुल्क में जारी रखना चाहते हैं कि गांधीवाद ठीक है और पीछे से गांधीवादी ठीक है। आदमी के तर्क बहुत अनूठे हैं। आदमी बहुत होशियारी से तर्क खोजता है। हमें पता भी नहीं चलता कि वह कैसे तर्क खोज सकता है।

पेरिस यूनिव्हर्सिटी में एक प्रोफेसर था दर्शन-शास्त्र का। उसने एक दिन अपनी कक्षा में आकर कहा कि मुझसे महान व्यक्ति इस दुनियाँ में कोई भी नहीं है। उसके शिष्यों ने पूँछा आप ? आप एक गरीब से शिक्षक, फटा कोट पहने हुए हैं, आप सबसे महान ! कैसे आपको पता चला ? मन में तो सोचा दार्शनिक है पागल हो गए होगें। दार्शनिकों के पागल हो जाने में देर नहीं लगती वे किनारे पर खड़े रहते हैं कभी भी पागल हो सकते हैं। एक विद्यार्थी ने पूँछा लेकिन आप–'महान सबसे"। वह आदमी उठकर नक्शे के पास गया और बोला–मैं सिद्ध कर दूँगा, जानते हो मैं तर्क-शास्त्री हूं। उसने नक्शे पर हाथ रखा और कहा–मैं पूँछता हूं कि दुनियाँ में सबसे महान देश कौन सा है ? उन्होंने कहा- फ्रांस। वे सभी फ्रांस के रहने वाले थे। फ्रांस–हिन्दुस्तान के रहने वाले होते तो हिन्दुस्तान। तिब्बत के होते तो तिब्बत। जहां हम पैदा होते हैं वही देश महान् हो जाता है क्योंकि हम जो महान् हैं पीछे। उन्होंने कहा—फ्रांस। उसने कहा तब सारी दुनिया खत्म हो गई, अब बच रहा फ्रांस। और अब मुझे सिद्ध करना है कि मैं फ्रांस का सबसे श्रेष्ठ आदमी हूं तब भी उसके बच्चे नहीं समझे कि वह कहाँ ले जा रहा है। पूँछा कि फ्रांस में सबसे श्रेष्ठ नगर ? तब बच्चों को शक हुआ कि मामला गड़बड़ हुआ जाता है। सब पेरिस के रहने वाले थे उन्होंने कहा पेरिस। उसने कहा तब फ्रांस खतम और रह गया पेरिस। अब पेरिस में यह सिद्ध करना है कि मैं बड़ा हूं या नहीं। और पेरिस में सबसे श्रेष्ठ स्थान ? निश्चित ही विद्या का मंदिर विश्वविद्यालय, वही यूनिव्हर्सिटी। तब उसने कहा ठीक, रह गई है यूनिव्हर्सिटी। और यूनिव्हर्सिटी में श्रेष्ठतम विषय, Subject ? Philosophy। और मैं फिलासफी (Philosophy) विभाग का Head of the Department हूं। आदमी इतना चालाक है। भीतर गहराई में केवल एक ही, बात है कि "मैं"। गाँधी महान् हैं, गांधीवाद महान् है, गांधीवादी महान् हैं। फिर वो पीछे से धीरे से कहता है कि मैं तो गांधीवाद का सेवक हूं। पीछे वह, पीछे वह आदमी खड़ा है। पीछे वह छोटा सा सेवक है जिसका सारा जाल है। वह सेवक घबड़ाया हुआ है। वह गांधीवादी घबड़ाया हुआ है। गांधी को कोई डर नहीं है आलोचना का। लेकिन गांधीवादी को डर है। वह आज भयभीत है। उसको भय क्या है ? उसको भय यह है कि गांधी पर तीव्र आलोचना अगर इस मुल्क में चली, लोगों ने सोचा और समझा, और गांधी में अगर कुछ गल्तियाँ दिखाई पड़ीं तो गांधीवादी की जड़ कट जाने वाली है। वह इस मुल्क में जी नहीं सकेगा। उसके शोषण का सारा उपाय नष्ट हो जावेगा। गांधी जी ने कहा कि मैं ट्रस्टीशिप (Trusteeship) चाहता हूं। मैं चाहता हूं एक ऐसा देश जहाँ धनी, अपने धन का मालिक न हो। इन ४० वर्षों की निरन्तर मेहनत के बाद गांधी जी एक भी धनी आदमी को ट्रस्टी (Trustee) बनने के लिए राजी कर पाए, एक भी आदमी को ? यह असफलता नहीं है। और अगर खुद गांधी जैसा महान् व्यक्ति, एक धनपति को राजी नहीं कर पाये ट्रस्टी (Trustee) बनने के लिए। तो गांधीवादी राजी कर लेंगे। ये छुट भैय्ये राजी कर लेंगे, गांधी के पीछे जो कतार लगी है। गांधी हार गए एक करोड़पति राजी नहीं हुआ बल्कि मामला उल्टा हो गया। गांधी के एक करोड़पति शिष्य ने—जब हिन्दुस्तान आज़ाद हुआ तब उनके पास ३० करोड़ की सम्पत्ति थी, २० साल के बाद उनके पास ३३० करोड़ की सम्पत्ति है। २० साल में ३३० करोड़ की सम्पत्ति इकट्ठी कर ली। शास्त्रों में मैंने पढ़ा था कि सत्संग का फायदा होता है पता पहली बार चला कि सत्संग का फायदा है। महात्मा के सत्संग

का फायदा। ट्रस्टी (Trustee) तो वे नहीं बने लेकिन ३० करोड़ से २० साल में सम्पत्ति का संग्रह ३३० करोड़ हो गया। कहते हैं—दुनिया के इतिहास में किसी करोड़पति के एक परिवार ने, इतने कम समय में इतनी सम्पत्ति इकट्ठी नहीं की। तो गांधीवाद को कैसे गिरने देगा करोड़पति। कैसे गिरने देगा अमीर गांधीवाद को। उसके ऊपर ही आज जिसकी जिन्दगी ठहरी हुई है। इधर गांधीवादी की आवाज है लेकिन पीछे से पूंजीवादी के स्वर हैं। लगाम उसके हाथ में है। वह कहता है सब हृदय परिवर्त्तन से ठीक हो जायेगा। गांधी जी एक आदमी का हृदय परिवर्त्तन नहीं कर पाए। एक आदमी का हृदय परिवर्त्तन नहीं हुआ जो अपनी सम्पत्ति छोड़ दे। अब कौन हृदय परिवर्त्तन करेगा? गांधी नहीं कर पाए तो अब कौन करेगा हृदय परिवर्त्तन? नहीं हृदय परिवर्त्तन की बातचीत के पीछे, हिन्दुस्तान में शोषण का जाल जारी रहे, इसकी चेष्टा चल रही है। ये सारी बातें सोचने जैसी हो गई हैं। इन बातों को चलने देना है या हिन्दुस्तान में एक समाजवादी समाज निर्मित करना है। एक शोषण विहीन समाज निर्मित करना है या कि हिन्दुस्तान में जो गरीबी-अमीरी के फासले हैं वह बड़े से बड़े होते जाने देना है। एक तरफ गरीबों का ढेर इकट्ठा होता जायेगा जिसके पास जिन्दगी की सांस लेने की सामर्थ्य भी नहीं रह गई है। एक तरफ धन इकट्ठा होता चला जाय। यह चलने देना है? यह नहीं चलने देना है तो हमें सोचना पड़ेगा कि गांधी जो हृदय परिवर्त्तन की बात करते थे उससे कुछ होगा या कुछ और करना जरूरी है। विनोबा ने मेहनत की गांधी की बात मानकर—उन्होंने श्रम कर लिया २० साल। उनकी मेहनत में उनकी नीयत में कोई भी शक नहीं हो सकता। उन जैसे साफ आदमी खोजने मुश्किल हैं। उन जैसे सच्चे और देश के लिए प्राण लगाने वाले आदमी खोजने मुश्किल हैं—लेकिन असफल हो गई सारी यात्रा। असफल इसलिये हो गई—कि आप चाहे जितना भी दान लेकर गरीबों में बांट दो कितनी भी जमीन बांट दो, शोषण का यंत्र बरकरार है। मैं एक लाख रुपया दान कर दूँ तो मैं नहीं बदलता हूं। मैं कल फिर—जिस तरह एक लाख पिछला कमाया था, दुगुनी ताकत से फिर उस एक लाख को कमाने में लग जाता हूं। वह शोषण का यंत्र जारी है। मैं जमीन दान कर दूं उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। दान दक्षिणा मे कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है। क्योंकि शोषण का यंत्र दान दक्षिणा से नहीं बदलता। बल्कि दान दक्षिणा कर ही वे पाते हैं जो शोषण से पहले इकट्ठा कर लें, फिर दान दक्षिणा करें। नहीं तो दान दक्षिणा करेंगे कहाँ से। पहले एक आदमी अमीर हो जाता है फिर दान करता है। और अमीर होने का जो यंत्र है वह जारी रहता है। दान करता जाता है और यंत्र भी जारी रखता है। इससे कोई मुल्क की सामाजिक व्यवस्था नहीं बदल सकती। **समाजवाद आए इस देश में तो सर्वोदय हो सकता है। लेकिन सर्वोदय से समाजवाद कभी नहीं आ सकता।** इस सब पर सोचना जरूरी है। इस सब पर विचार करना जरूरी है। लेकिन गांधी पर ही क्यों? क्योंकि गांधी को मैं इस सदी का श्रेष्ठतम मनुष्य मानता हूं इसलिए गांधी पर विचार किया जाना जरूरी है। जो श्रेष्ठतम हैं, उनके बाबत् हमें बहुत सजग और होश पूर्वक विचार कर लेना चाहिए। साधारण लोगों के बाबत् कोई विचार करने की जरूरत भी नहीं है। गांधी के बाबत् विचार करने की जरूरत है। और आने वाले २५-५० वर्षों में हिन्दुस्तान में जो कुछ हो सकता है, वह इस पर निर्भर हो सकता है कि हम गांधी के बाबत् क्या निर्णय लेते हैं। अगर हमें यह निर्णय लेना है कि गांधी ठीक हैं, तो मैं कहता हूं कि फिर १०० प्रतिशत यही निर्णय लो और विचार करो यही निर्णय लो। कहो कि गांधी ठीक हैं तो फिर १०० प्रतिशत यही निर्णय लो। फिर छोड़ो सारी यांत्रिकता, फिर छोड़ो सारा केन्द्रीयकरण, फिर तोड़ दो बड़े शहरों को और लौट जाओ गांवों में और गांधी का प्रयोग पूरा करो। ईमानदारी से यही निर्णय ले लो। एक Honesty तो हो। Sincerity तो हो।

लेकिन अभी मामला ऐसा है कि एक आदमी मैंने देखा। एक कार्टून मैंने देखा—एक आदमी जा रहा है

अपना सूटकेस लिए हवाई जहाज पर चढ़ रहा है। उसके मित्र उसे छोड़ने आए हैं, उससे पूछते हैं आप कहां जा रहे हैं? वह आदमी कहता है मैं लन्दन जा रहा हूं हिन्दी पर Research करने। हिन्दी पर रिसर्च करने लन्दन जा रहे हैं। एक आदमी हिन्दी के पक्ष में भाषण देता है और अंग्रेजी में भाषण देता है। हिन्दी राष्ट्र-भाषा होनी चाहिए—यह अंग्रेजी में बोलता है। यह पागलपन छोड़ो। एक तरफ हम गांधी का विचार करें और गांधी को सही मानें और जय जय कार करें। और दूसरी तरफ? दूसरी तरफ यंत्रीकरण करें तो गलत है। फिर यंत्रीकरण मत करो। फिर तोड़ दो सारे बड़े यन्त्रों को, फिर पश्चिम से सहायता मत लो। फिर मत बनाओ भिलाई, फिर मत खड़े करो भाखरा और नंगल, छोड़ो इनको, इनकी जरूरत नहीं है और लौट चलो गांवों को। तो भी मैं तैयार हूं। गांधी पर विचार करके इतनी हिम्मत भी मुल्क करे तो भी समझ में आता है। लेकिन यह बेईमानी, यह काइयांपन ठीक नहीं है। गांधी की जय-जय-कार कर रहे हो और जो कर रहे हो वह बिल्कुल दूसरा है। इसकी वजह का परिणाम यह होता है कि एक तरफ तो हम बड़ा काम भी करते हैं और दूसरी तरफ जो बिल्कुल उल्टा है वह भी किए जाते हैं। एक तरफ बड़ी मिल खड़ी करते हैं दूसरी तरफ खादी को प्रोत्साहन देते हैं। अगर आप एक—अगर मैं एक खादी की धोती पहनूं जो दस रुपये में मिल सकती है बाजार में साधारण धोती तो ये साठ रुपये की होगी। ६० रुपये पर पन्द्रह रुपये सरकार देगी। सरकार किसके पास से दे रही है। सरकार उनके पास से दे रही है जो खादी नहीं पहनते। उनसे टैक्स ले रही है और जो खादी पहनते हैं उन्हें पन्द्रह रुपये का कन्सेशन (Concession) दे रही है। करोड़ों रुपया इन २० वर्षों में खादी को Concession देने में खर्च किया गया। किसलिये? इन करोड़ों रुपये से मिलें बन सकती थीं, मशीनें बन सकती थीं। नहीं बनाना है मिलें और मशीनें तो फिर तोड़ दो इन्हें और पूरी खादी ही बनाओ। लेकिन मुल्क को एक स्पष्ट निर्णय चाहिए कि हम जो करेंगे वह साफ हो। स्पष्ट हो। हम ऐसा न करें कि एक कदम आगे रखें और दूसरा पीछे रखेंगे। बायें हाथ से ईंट रखेंगे और दाएं हाथ से खींच लेंगे। इस मुल्क का भवन फिर निर्मित नहीं हो सकता। एक स्पष्ट निर्णय चाहिए मुल्क के सामने गांधी के पक्ष में, तो गांधी के पक्ष में मेहनत से जुट जाना चाहिए। मुझे लगता है कि गांधी के पक्ष में जुटना आत्मघात है। यह मुझे कहने का हक है। मुझे लगता है कि गाँधीवाद से पूरी तरह मुक्त हो जाना चाहिए। गांधीवाद मुल्क के हित में सिद्ध होने वाला नहीं है। मुल्क को चाहिए नवीनतम वैज्ञानिक उपकरण, श्रेष्ठतम विकसित तकनीक, केन्द्रीय-करण, नई से नई शोध, नया विज्ञान ताकि मुल्क की दरिद्रता मिट सके, मुल्क सम्पन्न हो सके। **और मैं यह मानता हूं कि गांधीवाद से मुक्त होने का मतलब गांधी के आदर से मुक्त हो जाना नहीं है।** सच तो यह है कि अभी जो लोग समझते हैं कि गांधी को आदर दे रहे हैं उन्होंने कुल इतना आदर दिया है कि हवालात में एक फोटो लटका दी है गांधी की, अदालत में एक फोटो लटका दी है। उन्हीं के नीचे बैठ के मजिस्ट्रेट रिश्वत ले रहा है। गांधी लटके हुए हैं। हवलदार के पीछे फोटो लटकी हुई है, हवलदार गाली दे रहा है माँ-बहन की गाली दे रहा है, जिसके लिए गांधी जिन्दगी भर लड़े हैं, फोटो लटकी देख रही है। ये सम्मान बढ़ाया है। मैं आपसे कहता हू कि गांधवादियों के चक्कर में अगर गांधी रह गए, तो २० साल में गांधी की कोई इज्जत नहीं बचेगी इस मुल्क में। इनकी वजह से इज्जत नष्ट हो जायेगी। इनसे गांधी का छुटकारा चाहिए। गोडसे तो गांधी की हत्या करने में सफल नहीं हो पाया। सिर्फ शरीर को मार पाया। गांधीवादी गांधी की आत्मा भी मार डाल सकते हैं। इनसे बचाना जरूरी है गांधी को। यह कोई समझ की बात है। गांधी कोई पंचम जार्ज हैं। हवालात में लटकाए हो उनको किसलिए? ऐसे कोई आदर बढ़ जायेगा कि तुम मूर्तियाँ गाँव-गाँव में खड़ी कर दोगे तो आदर बढ़ जावेगा। आदर किस तरह बढ़ जायेगा। बल्कि सरकार जिस संत को सरकारी बना लेती है वह संत नष्ट हो जाता है क्योंकि लोकमानस से उसकी प्रतिष्ठा चली जाती है। गांधी की जय वह

भीं थी जो १९४७ के पहले लोग बोलते थे और अब भी बोलते हैं लेकिन अब बोलने वालों में सिर्फ प्रायमरी स्कूल के बच्चे सुनाई पड़ते हैं और कोई भी नहीं। और ये बेचारे प्रायमरी स्कूल के मास्टर और बच्चे, इनका सदा से यही काम रहा है। चाहे पंचम जार्ज की जय बुलवाओ, चाहे गांधी की जय बुलवाओ। इन जय-जयकारों से कोई प्रयोजन नहीं। मेरी दृष्टि में—भारत में गांधी के विषय में पुनर्विचार किया जाना आवश्यक है। नहीं मैं कहता हूं कि मुझसे राजी हो जाये। न ही मैं यह कहता हूं कि मैं जो कहता हूं वह सच है। नहीं, यह दावा मेरा नहीं है। लेकिन जो मुझे सच दिखाई देता है वह कहने का मुझे हक है और मैं समझता हूं कि जो थोड़े भी बुद्धिमान हैं, उन्हें सुनने का भी कर्त्तव्य दिखाना चाहिए। सुनलें, सोचें गलत हो फेंक दें। कुछ ठीक लगे मुझसे कोई सम्बन्ध न रहा। आपके विवेक को ठीक लगता है, वह आपका हो जाता है। लेकिन विचार का प्रवाह खुलना चाहिए और परमात्मा को धन्यवाद दे सकते हैं हम कि गांधी जैसा बड़ा आदमी अभी-अभी हुआ हमारे बीच। उस पर अगर हम विचार कर लें तो शायद आने वाले देश के लिए सुगम, साफ और सीधा रास्ता निर्मित करने में सफल हो जायें। इस धारणा से उन पर पुनर्विचार करने के लिए मैं सारे मित्रों को देश भर में आमंत्रित करना चाहता हूं लेकिन वे घबड़ाए हुए हैं वे कहते हैं विचार नहीं, आप आइए स्तुति करिए, जय-जयकार करिये। मैं कहता हूं—वह कोई भी कर रहा है। आलोचना करने के लिए सोचना जरूरी है, परन्तु प्रशंसा करने के लिए सोचना जरूरी नहीं होता। सच तो यह है कि जो सोच नहीं सकते वे बेचारे प्रशंसा करके निपट जाते हैं। एक कुत्ता भी पूंछ हिला कर प्रशंसा जाहिर कर देता है, कोई सोचने की बहुत जरूरत नहीं होती। लेकिन अगर आलोचना करना हो तो सोचना जरूरी है, विचारना जरूरी है और हिम्मत व साहस से विचार करना जरूरी है। मेरी ये थोड़ी सी बातें आपने सुनीं गांधी के इंच-इंच रत्ती-रत्ती पर विचार करना जरूरी है। मेरी बातों को इतने प्रेम और शान्ति से सुना और उन मित्र को भी बहुत धन्यवाद देता हूं। क्रोध में भी इतनी देर वे शान्त रहे—थोड़ी देर क्रोधित हुए, इतनी देर शान्त रहे कोई कम है। आप सबने मेरी बातों को इतनी शान्ति से सुना उसके लिए बहुत अनुग्रहीत हूं। मेरी अन्तिम—सबके भीतर बैठे परमात्मा के लिए प्रणाम करता हूं, मेरा प्रणाम स्वीकार करिये।

(शहीद स्मारक भवन, जबलपुर में दिया एक प्रवचन)

★ शास्त्र और सिद्धान्त तो सूखे पत्तों की भांति हैं, स्वानुभूति की हरियाली न उनमें है, न हो सकती है, हरे पत्ते और जीवित फूल तो स्वयं के जीवन वृक्ष में ही लगते हैं।

★ मैं खोजता था तो मौन से बड़ा कोई शास्त्र नहीं पा सका और सब शास्त्र खोजे तो पाया कि शास्त्र व्यर्थ हैं और मौन ही सार्थक है।

★ कहां जा रहे हो ? जिसे खोजते हो, वह दूर नहीं निकट है, और जो निकट है, उसे पाने को यदि यात्रा की तो उसके पास नहीं, उससे दूर ही निकल जाओगे, ठहरो और देखो, निकट को पाने के लिये ठहरकर देखना ही पर्याप्त है।

पत्र प्रेरणा

पूज्य आचार्य श्री से

श्री पुष्कर भाई गोकाणी, सुरेन्द्रनगर ने जब यह जानना चाहा कि बूंद का सागर में खो जाना, एक व्यक्ति की अपनी निजता Individuality को खो देना है—ऐसा मन को प्रेरक नहीं है, तत्संबंधित एक पत्र:

मेरे प्रिय

प्रेम। पत्र पाकर आनंदित हूं।
बूँद को सागर बनना नहीं है।
बूँद सागर है ही।
यही उसे जानना है।
जो है—जैसा है—उसे वही और वैसा ही जानना सत्य है।
सत्य मुक्तिदायी है।
जयश्री को प्रेम, और सबको भी।
रजनीश के प्रणाम।
२४।४।१९६९

●●●

(श्री घनश्याम दास जनमेजय ग्वालियर को लिखा गया एक पत्र)

मेरे प्रिय,

प्रेम,
जागृत में ही जागें।
निद्रा या स्वप्न में जागने का प्रयास न करें।
जागृत में जागने के परिणाम स्वरूप ही अनायास निद्रा या
स्वप्न में भी जागरण उपलब्ध होता है।
लेकिन उसके लिए करना कुछ भी नहीं है,
कुछ करने से उसमें बाधायें ही पैदा हो सकती हैं,
निद्रा तो जागरण का ही प्रतिफलन है,
जो हम जागते में हैं, वही हम सोते में हैं,
यदि हम जागते में ही सोये हुए हैं, तो ही निद्रा भी निद्रा है।
जागते में विचारों का प्रवाह ही सोते में स्वप्नों का जाल है,
जागने में जागते ही निद्रा में भी जागरण का प्रतिफलन शुरू हो जाता है।
जागते में विचार नहीं तो फिर सोते में स्वप्न भी मिट जाते हैं।
शेष शुभ।
वहां सबको प्रणाम!

रजनीश के प्रणाम
९।९।६९

जीवन और सत्य खोज की दिशा

(पूज्य आचार्य श्री से कल्याणजी आनंद जी की भेंट)

(बंबई जीवन जागृति केन्द्र के सौजन्य से)

कल्याण जी : आचार्य जी, उस दिन जो बात हुई थी, सबसे बड़ा मूलभूत प्रश्न है जो हमारे ध्यान में आया था उसके बारे में मैं आपसे कुछ जानना चाहता हूं। वह यह है कि शून्यवाद के साथ अक्सर जो हमें दिगंबर जैनिज्म में दिखायी देता है, शायद वह शून्य का इन्टरप्रोटेशन उतना ही पोज़ेटिव है। लेकिन शब्द प्रयोग से ही लोगों के जनरल ख्यालातों में इन्टरप्रोटेशन हो जाते हैं। हरेक को नया फार्मूला एक पुराने संधि की दी नहीं जा सकती लेकिन प्रापर शब्द शायद यूज किया जा सकता है। तो इस संभावना से हमें यह नजर आता है और कई लोगों के माइन्ड में यह बैठाया हुआ है कि यह "शून्य इज ओनली व्हिच कैन डिस्काइन्ड युअर एप्रोच् टिल दी टोटल"—या और कोई ऐसी चीज है या रास्ता है कि जिससे सामान्य जनता में यह निगेटिवइज्म के प्रति ले जाने की दृष्टि आप में है, ऐसा प्रतीत न हो।

आचार्य जी : ऐसा क्यों प्रतीत न हो ? मुझमें प्रवृत्ति है ही और ऐसा भी मैं नहीं मानता हूं कि और कोई रास्ता है। सुनने के अतिरिक्त कोई रास्ता भी नहीं है और निगेटिव माइन्ड ही सत्य तक पहुंचता है और दूसरा माइंड कभी पहुंचता भी नहीं। इसे थोड़ा समझ लेना उपयोगी है। असल में जो भी हम जानते हैं, जो भी सीखा है, जो भी सुना है, जो भी हमारा अनुभव है, वह तो हमारा पोज़ेटिव माइंड बन जाता है। वह हमारी संपदा है। इस क्षण जो भी आप जान रहे हैं, आज तक जो इकट्ठा हो गया है वही तो आपका माइन्ड है। बचपन से लेकर अभी तक या अगर लम्बा विस्तार करें तो सारे जन्मों का जो भी आपके पास इकट्ठा हो गया है ज्ञान, वही तो आपका माईंड है। इस माइंड से ही सत्य को नहीं जाना जा सकता, क्योंकि सत्य अज्ञात है—'अननोन' है। और जो भी आप जानते हैं, वह 'नोन' है। नोन और अननोन के बीच छलांग न लगे—जम्प न हो जाय, तो अननोन तक आप कभी नहीं पहुंच सकते। तो अगर सत्य को जानना हो—अस्तित्व को जानना हो, सत्य न कहें—अस्तित्व को जानना हो, तो जो भी हम जानते हैं उसको विदा देनी पड़ेगी, उसे हटा देना पड़ेगा। और चित्त में जानने के जो भ्रम पैदा हो गये हैं कि मैं जानता हूं, यह मैं जानता हूं—यह चित्त के ऊपर पच्चीस तरह की दीवालें हैं और पर्दे हैं, वे सब तोड़ देने पड़ेंगे और मुझे उस जगह खड़ा होना पड़ेगा, जहाँ मैं कह सकूँ कि मैं कुछ भी नहीं जानता और खाली होकर खड़ा हूं। ताकि जो है, उसे जान सकूँ। अज्ञान के होने की हिम्मत जुटाना ज्ञानी होने की पहली शर्त है और जिसको हम ज्ञानी कहते हैं वह चूंकि अज्ञानी की हिम्मत बिल्कुल नहीं जुटाता है, बल्कि ज्ञानी होने की ही दौड़ में लगा रहता है, तो वह कभी उस इनोसेंस को नहीं उपलब्ध होता है जो अज्ञान को उपलब्ध, जो उस आदमी को उपलब्ध है जो कह सकता है कि मैं नहीं जानता हूं—जो पूरे हृदय से कह सकता है कि मैं नहीं जानता हूं। वह पोर-पोर, कण-कण जिसका कह

सकता है कि मैं नहीं जानता हूं— "आई एम इनोसेंट," ऐसा जो कह सके कोई तो पोज़ेटिव माइन्ड गया । अब रह गयी शून्य की दशा क्योंकि मैं कुछ नहीं बोलता हूं। इस शून्य में ही, इस शून्य की अवस्था में ही, इस निगेटिव स्थिति में ही वह सब हम पर टूट पड़ता है। वह सब, जो हमारे चारों तरफ घिरा है—वह हमारे भीतर भी घिरा है। वह जो अस्तित्व है, वह सब तरफ से द्वार प्रवेश पा जाता है और हम जानते हैं, लेकिन उस जानने को भी अगर हमने फिर ज्ञान बना लिया—नोइंग को अगर नालेज बनाया, तो फिर पोज़ेटिव माइंड इकट्ठा होना शुरू हो जाता है और तब जो झलक मिली थी, वह फिर खो जाती है। यह प्रत्येक साधक को या खोजी को इस चेष्टा में होना चाहिए कि वह हर रोज कैसे निगेटिव माइंड को उपलब्ध कर ले। जो जाना था उसको विदा कर ले । वह फिर कैसे खाली हो जाय— वह फिर कैसे इनोसेंट हो जाय, अन्यथा जो हम कल से जानते हैं, वह हमारे आज के जानने के बीच में बाधा बनता है। और तब, फिर हम उसी के रिपीटीशन को ही दोहराते चले जाते हैं। तो रोज-रोज मुक्त हो जाना उस सबसे जो हम जान लेते हैं। ऐसा जैसा यह रोज धूल जम जाती है और हम स्नान करके मुक्त हो जाते हैं। ऐसा ही चित्त के दर्पण पर भी रोज अनुभव की धूल जम जाती है—शास्त्र की धूल जम जाती है—शब्द की धूल जम जाती है, रोज कुछ न कुछ जम जाता है। उसे रोज झाड़ देना है, ताकि सत्य का दर्पण खाली हो जाय। वह खाली दर्पण ही देखता है—वह खाली दर्पण ही जान सकता है, क्योंकि वह ही रिफ्लैक्ट कर सकता है, वहीं इन्टीग्रेटेड प्रतिबिम्ब बनते हैं ।

आपने कल भी पेंट किया था, जिन्दगी भर आप चित्र बनाते रहेंगे। वह सब चित्र जो आपने बनाये थे, अगर आपके चित्त के किसी भी कोने में बैठे हुए हैं, तो आप नया चित्र तो कभी बना ही नहीं सकते। घूम फिर कर वही चित्र फिर बनते चले जायेंगे और आपका चित्त उन्हीं चित्रों को बार बार केन्द्रित करता रहेगा। नहीं, उनको बिदा करना पड़ेगा। उनको ऐसे बिदा कर देना पड़ेगा, जैसे आपका उनका कोई लेना देना नहीं। जो बन गया वह गया—जो बन गया वह मर गया, चाहे वह ज्ञान हो, चाहे वह चित्र हो, चाहे धारणा हो, चाहे शब्द हो, चाहे सिद्धांत हो । जो बन गया है वह मर गया। जो मर गया है उससे छूट जायें, ताकि फिर जीवन को स्पंदना वैसी ही खड़ी हो जाये, जैसे कि कोई नये में खड़ी होती है, ताकि फिर नया, नया हो सके। और वह जो सत्य है वह नित नया है, और वह जो अस्तित्व है वह कोई ऐसी डेड इन्टाइटी नहीं है, कि आपने एक बार जान ली और चुक गया। उसे तो प्रतीतों से रोज रोज जानते ही चले जाना है, क्योंकि वह रोज नया है वह रोज नया होता चला जा रहा है। और उस नये को जानने के लिए वह जो ओल्ड माइंड है वह बाधा बनता है और ओल्ड माइंड यानी पोजेटिव माइंड है। ओल्ड पोजेटिव भी होता है हमें। वह, जो नया है वही निगेटिव होता है । निगेटिव का मतलब जिसका कोई संग्रह न हो, जो बिल्कुल खाली हो। मैं जो कह रहा हूं शून्य, वह शून्य अगर ठीक से समझें, तो मैं ऐसा कहता हूं कि ब्रह्म को जानने का द्वार है। शून्य तो मैथर्ड है—शून्य तो विधि है—शून्य तो मार्ग है, जिसे हम जान लेते हैं शून्य से वह ब्रह्म है और इसीलिए शून्य और ब्रह्म में मैं कोई विरोध नहीं मानता। पोज़ीटिव और निगेटिव में भी विरोध नहीं मानता । निगेटिव जो है पोज़ीटिव के प्रगट होने का रास्ता है, लेकिन जैसे ही पोज़ीटिव प्रगट हुआ निगेटिव ढंका, शुरू हो गयो, ताकि फिर पोज़ीटिव को हटाओ ताकि फिर निगेटिव और यह चलता ही रहे—सतत् और ऐसी स्थिति आ जाय कि माइंड पोज़ीटिव बने ही नहीं । चीजें बनें और विदा हो जायं और माइंड हमेशा निगेटिव हो, तो ही आप जान पायेंगे । लेकिन हम देखते हैं नहीं। एक कैमरे से आप फोटो निकाल रहे हैं। निगेटिव प्लेट लगाई हुई है । वह जैसे ही चित्र बन जाता है तो प्लेट व्यर्थ हो गयी । वह जो निगेटिव थी, पोज़ीटिव हो गयी। उस पर कुछ बन गया, वह खत्म हो गयी—वह खराब हो गयी—वह व्यर्थ हो गयी है। एक चित्र बन गया है, वह मर

गयी है । हमारा चित्त जो है, बहुत कुछ केन्द्रित है, प्लेट की तरह काम कर रहा है और इसलिए बहुत जल्दी मर जाता है । बच्चे के पास भी बच्चे जैसा मन नहीं है, बच्चे के पास भी बूढ़े जैसा मन है । यह फर्क हो सकता है कि बच्चे के पास दस साल के बूढ़े का मन है । सत्तर साल वाले के पास सत्तर साल के बूढ़े का मन है, लेकिन एक दिन के बच्चे के पास भी बच्चे का मन नहीं है एक दिन के बूढ़े का मन है । एक दिन का इकट्ठा हो गया है । तो चाहे सत्य हो, चाहे कला हो, चाहे दर्शन हो, चाहे धर्म हो, सारी प्रतिक्रियाओं में आपको निगेटिव से गुजरना ही पड़ेगा और आप जितना निगेटिव रह सकते हैं उतना ज्यूनिअन पोजीटिव आपके भीतर से प्रगट होता है । मैं तो कहता भी नहीं कि शब्द बदले, क्योंकि जरूरत नहीं है और वह जो सामान्य जन, जिसको हम कहते हैं और किसी अर्थों में हम सभी सामान्य जन होते हैं । वह जो सामान्य जन का चित्त है वह पोजीटिव की मांग करता है, क्योंकि वह भयभीत है और निगेटिव डराता है, क्योंकि निगेटिव अनजान है और पोजीटिव जाना हुआ है, पहचाना हुआ है, परिचित है, उसमें सुरक्षा मालूम पड़ती है । अनजाना—अपरिचित है, असुरक्षा मालूम पड़ती है, डर लगता है । मन जाने में घबराता है । ऐसे रास्ते पर चलो, जो पहचाना हुआ है । लेकिन ध्यान रहे - जो ऐसे रास्ते पर चलेगा जो पहचाना हुआ है वह कहीं पहुंचेगा नहीं, क्योंकि पहचाने हुए पर घूमना नहीं हो सकता है—पहुंचना नहीं हो सकता है । अगर पहचाने हुए से पहुंचना होता, तो पहुंचना हो गया होता । वह तो पहचाना हुआ रास्ता है । उस पर तो हम चल चुके हैं—जा चुके हैं । नहीं पहुंचे हैं, फिर उस पर घूम रहे हैं, तो कोल्हू का बैल बन जाता है आदमी ।

अनजान को खोजना होगा जिसपर हम नहीं चले हैं तो शायद उस पर पहुंच सकें । और रोज-रोज ही खोजना पड़ेगा । ऐसा नहीं है कि यह यात्रा किसी दिन पूरी हो जाती है—एक दिन आदमी कह देता है कि मैं ज्ञानी हो गया, बात खत्म । अब मैं ब्रह्म ज्ञानी हो गया अब मुझे जानने को कुछ शेष नहीं । ऐसा जो आदमी कहता है वह किसी अनुभव को पकड़कर पोजीटिव हो गया है । कोई अनुभव कितना ही बड़ा अनुभव हो, बस वह वहीं रुक गया है और मर गया है । अब उसका जीवन नहीं रहा, क्योंकि जीवन का अर्थ ही जानना है । जानना है और जीना है, और जब हम कहते हैं अनंत है अस्तित्व, कहते हैं कि अनंत है परमात्मा, उसका मतलब ही इतना है कि आप कितना ही जान लो, फिर भी जानने को अनंत सदा है । आप कितना ही जी लो, फिर भी अनंत है । आप कितना ही पा लो फिर भी अनंत है । अगर पाये हुए को पकड़ लिया, तो ध्यान रहे—पोजीटिव हमेशा सीमित रहेगा । पोजीटिव असीमित नहीं हो सकता । निगेटिव ही असीम हो सकता है—शून्य ही असीम हो सकता है । बाकी तो सबकी सीमा है । तो जिसको जान लिया पकड़ लिया, आप सीमित से बंध गये और जो अनुभव गुजर चुका, वह मर चुका । मैंने कल आपको प्रेम किया और उसको पकड़ के बैठ गया हूं कि आपका प्रेमी हूं । न आप वह रहे—न मैं वह रहा—न दुनिया वह रही, कुछ भी वह नहीं रहा है । अब सिर्फ एक मरा हुआ अनुभव और एक स्मृति को पकड़कर बैठा हुआ हूं और आज जब आप मुझे मिलोगे तो मैं उसी स्मृति को लाकर बीच में आपको देखता हूं और तब तकलीफ शुरू हो गयी—उपद्रव शुरू हो गया—क्योंकि आप वह आदमी नहीं हैं—न मैं वह आदमी हूं, अब कुछ भी वह नहीं है । अब वह मरा हुआ अनुभव बीच में खड़ा है और इस तरह मरे हुए अनुभव बीच में बहुत से खड़े हो जायेंगे, तो हमारा जीवन से संपर्क ही टूट जाता है । क्या पता ? अब कल प्रेम किया था, आज नहीं भी हो सकता है ? इसीलिए तो प्रेमिका को हम पत्नी बना लेते हैं । पत्नी पोजिटिविटी है, वह प्रेमी का बिल्कुल निगेटिव है । वह कलप्रेमिका थी, आज नहीं भी हो सकती । लेकिन पत्नी को हम पोजीटिव बना लेते हैं क्योंकि वह कल भी थी, आज भी होना पड़ेगा, कल भी होना पड़ेगा । जब तक मर न जाये तब तक उसे पत्नी बना रहना पड़ेगा । लेकिन पत्नी होने में प्रेमिका मर गयी—और प्रेम भी मर गया और पत्नी से प्रेम की अपेक्षा, फिर तो पागलपन है । वह

प्रेमी कैसे हो सकती थी, जहां कि प्रेम के न मिलने की संभावना है—जहां जरूरी न था कि प्रेम मिले ? वह यह अपेक्षा थी। अब तो अपेक्षा करना भी पागलपन है—अब तो प्रेम मिलेगा ही और जो 'मिलेगा ही' उसमें कोई सार्थकता नहीं। वह व्यवसाय हो गया—वह धंधा हो गया—सुरक्षा हो गयी। सारी चीजों के मामले में यह ध्यान रख लेना जरूरी है कि हमारा मन कोशिश करता है पोजीटिव बनाने की। और पोजीटिव बनाने की कोशिश इसलिए करता है कि लोगों की हिम्मत बहुत ज्यादा नहीं है—बहुत कमजोर हैं, सिक्योरिटी की मांग ज्यादा है, सत्य की माँग कम है, क्योंकि सुरक्षा की मांग ज्यादा है। वह कहता है, जो जाना है उसको पकड़ लो। अनजाने में मत भटको, पता नहीं – भूल जाओ, जो हाथ में है वह खो जाय। मेरा कहना यह है, कि जो है, वह कभी नहीं खोता। उसे अनजान रास्ते में भटकने में कोई डर नहीं है। जो नहीं है और झूठे आपके ख्याल में है, वही खो सकता है—और, अनजान रास्तों पर भटकते-भटकते आपका माइंड बदलता है - पूरा; और धीरे-धीरे निगेटिव हो जाता है। निगेटिव का मतलब सिर्फ इतना है कि जो कुछ नहीं पकड़ता है—जो कहीं नहीं रुकता—जो कोई दीवाल नहीं बनाता—जो सदा खुला है और मुक्त है, और जिसके भीतर प्रवेश की अनंत सम्भावना है। निगेटिव का मतलब क्या हुआ ? यह कमरा है, इस कमरे में हम आये हैं। ये दीवालें हैं—यह कमरा नहीं है, इन दीवालों के बीच में जो खाली जगह है वह कमरा है। और खाली जगह जितनी बड़ी होगी, कमरा उतना बड़ा होगा। यह खाली जगह भरी हुई है, तो इसका प्रवेश निषिद्ध हो जायगा—मुश्किल हो जायगा। पोजीटिव मरा हुआ माइंड है, उसके भीतर नये का प्रवेश असम्भव है। और, सत्य जो है वह नित नया है - आस्तित्व जो है वह नित नया है। वह प्रतिपल द्वार खटखटा रहा है कि खोलो, भीतर आ जाओ। लेकिन यहां तो पोजीटिव माइंड—मरा हुआ माइंड है। वह कहता है, जगह नहीं है। वह कहता है, हमारे पास जो परिचित है—बैठा है, वह ठीक है—अपरिचित को यहां जगह नहीं है। अपरिचित के झंझट में कौन पड़े ? बामुश्किल इनसे हम परिचित हो पाये हैं, अभी जो अन्दर आ गये हैं। अपरिचित को और कौन बुलाये ? दरवाजा हम बन्द करके बैठे हैं। परिचित तो सिर्फ मर गया। वह जो रोज रोज दस्तक दे रहा है—नया अस्तित्व, उसके द्वार बन्द हो गये हैं। निगेटिव माइंड का मतलब है खाली कमरा, जिसमें कोई भरा हुआ नहीं है—जिसमें अतिथि आते हैं और चले जाते हैं, कोई ठहर ही नहीं रहा है। तो, नये अतिथि के लिए रोज द्वार खुला हुआ है कि वह आ जाये। हम प्रतीक्षा में हैं कि वह आ जाय। नये की इतनी तीव्र प्रतीक्षा ही अन्ततः अस्तित्व को जोड़ पाती है—जीवन से जोड़ पाती है, नहीं तो नहीं जुड़ पाती है। निषेध और नकार और शून्य, वह जो विदेह जीवन है उसको जानने का द्वार है। उनमें कोई विरोध नहीं है। और, सामान्य जन को इतनी विधायकता पकड़ायी गयी है—इतना पोजीटिव पकड़ाया गया है, इसलिए वह सामान्य है नहीं तो वह भी असामान्य हो जाय। फर्क कुछ है नहीं, एक सामान्य व्यक्ति में और एक असामान्य व्यक्ति में। और क्या फर्क है ? वह सामान्य पकड़े हुए है पोजीटिव को, इसलिए सामान्य हो गया है। वह भी छोड़ दें, उसकी भी रूट टूट जाय—जड़ें उखड़ जायें, तो वह भी असामान्य हो जाय—वह भी उतर जाय उसकी यात्रा में। तो, न तो मैं सब कुछ बदलना चाहता हूं बिल्कुल, बल्कि जोर देना चाहता हूं कि शून्य, शून्य ही है। और हिम्मत जुटाओ उसमें घूमने की और हिम्मत जुटाओ उसमें कूदने की।

एक छोटी सी कहानी मैं कहता रहता हूं इस सम्बन्ध में:—

एक आदमी है, वह दुनिया का अन्त खोजने के लिए निकल पड़ा है। उसे बहुत लोग समझाते हैं कि दुनिया का अन्त क्या कभी कोई खोज पाया है ? और दुनिया क्या कहीं अन्त होती है ? किसलिए पागल हो रहे हो ? लेकिन, जितना लोग समझाते हैं उतना ही उसकी जिद्द बढ़ती जाती है कि जब कोई नहीं खोज पाया है, तो मैं कोशिश तो करूं। और, वह खोजते खोजते एक जगह पहुंच जाता है जहां आखिरी जगह आ

जाती है—आखिरी मन्दिर आ जाता है और उस मन्दिर का पुजारी कहता है कि और आगे मत जाना, क्योंकि थोड़ी ही दूर जाकर दुनिया खत्म हो जाती है। वहां जाना ही मत, क्योंकि उस दुनिया के अन्त को देखना ही बहुत घबराने वाला है। यह मन्दिर हम इसलिए ही बनाये हुए हैं कि कभी कोई भूल-चूक कर आ जाय तो उसे आगे न जाने दूं। लेकिन, वह आदमी कहता है कि मैं तो उसकी खोज को ही निकला हूं---मैं रुकूंगा नहीं। वह आदमी आगे गया है। वहां एक तख्ती लगी है, जहां लिखा है—"हियर एंडस् द वर्ल्ड"— "यहां खत्म होती है दुनिया," आगे मत जाओ, सावधान! लेकिन उसे तो जाना ही है, वह तो उसे ही देखने आया है। लेकिन, उस तख्ती के पास पहुंचकर उसके प्राण घबराने लगते हैं, क्योंकि उसे पहली दफा ख्याल आता है कि जहां दुनियां खत्म हो जायगी, वहां मैं कैसे बचूंगा ? मैं तो दुनिया का एक हिस्सा हूं और सच में अगर दुनिया खत्म होती है तो मैं कैसे बचूंगा! उसके पैर लड़खड़ाने लगते हैं, क्योंकि दुनिया जहां खत्म होगी वहां मैं भी खत्म हुआ—मैं कैसे बचूंगा ? दुनिया का अन्त तो देखना चाहता हूं लेकिन, मैं तो बच जाऊं। फिर भी वह कहता है कि तीन-चार कदम तो आगे बढ़कर देखूं। वह दस पांच कदम आगे जाता है, खड्ड आ गया अन्त, जहां आगे शून्य ही शून्य है—नीचे शून्य ही शून्य है—वाटमलैस, न कोई नीचे तल है– न ऊपर कोई तल है—न आगे कोई तल है। सिर घूम जाता है। वह एकदम भागता है कि कहीं ऐसा न हो कि खड्डे में मैं गिर जाऊं, क्योंकि सब गड्डे वे देखे थे जो निकलने वाले थे—जिनसे निकला जा सकता था। यह गड्डा ऐसा था, जिसमें से निकल ही न सकूंगा, क्योंकि यह गड्ढा ऐसा है, जिसमें गिर ही सकूंगा। तो, गिरते ही जाऊंगा, गिरता ही रहूंगा। ऐसा कभी वक्त ही नहीं आयेगा कि मैं कह सकूं कि गिर गया। जगह आ गयी नीचे टिकने वाली। वह भागकर घबराता है। वह उल्टे लौट पड़ता है—एकदम, आकर मन्दिर की सीढ़ियों पर गिर पड़ता है—बेहोश हो जाता है। पुजारी उसे हिलाता है, पानी छिड़कता है, पूछता है—क्या हुआ ? वह कहता है, ठीक है। जो कुछ हुआ उसकी याद ही मत दिलाओ, क्योंकि जो देखा वह बहुत घबराने वाला था। वह पुजारी कहता है कि तख्ती के उस तरफ तूने पढ़ा था कुछ ? उसने कहा----मैं तो घबरा कर भाग आया हूं। दूसरी तरफ क्या लिखा था वह मैंने नहीं पढ़ा। वह पुजारी कहता है कि दूसरी तरफ लिखा था कि यहां परमात्मा शुरू होता है—अगर, तू कूद भी जाता – मगर तू वापस लौट आया। अब तुझे जन्म-जन्म लग जायेंगे, क्योंकि वह तख्ती अब उसी जगह नहीं मिलेगी, क्योंकि सब चल रहा है—कहीं कुछ ठहरा नहीं है। अगर तू वापस भी लौटकर आ जाय, तो वह तख्ती उसी जगह नहीं मिलेगी—और वह अंत भी उस जगह न मिलेगा—और फिर जन्म जन्म लग जायेंगे। तब तू पहुंच पायेगा। ख्याल रखना—अगर वह गड्ढा आ जाय, जहाँ सब खत्म हो जाता है, तो तू भी कूद जाना, क्योंकि वहां तू पहली दफे कूदकर पायेगा कि सब हो गया। शून्य में होकर ही कोई पाता है कि सब हो गया। और जिसको हम कहते हैं ब्रह्मवादी और ईश्वरवादी और आत्मवादी, यह कोई नहीं भी इसे पा सकता है; क्योंकि यह सब पोजिटिव को पकड़ते हैं। यह कहते हैं कि एक ईश्वर है—उसके हम चरण पकड़े बैठे हैं और भजन कीर्तन कर रहे हैं। यह मिटने वाला आदमी नहीं है—मिटने की हिम्मत इसकी नहीं है। यह तो, और परमात्मा को पकड़कर अपने को बनाने की कोशिश में लगा हुआ है। यह नाच रहा है—कूद रहा है—प्रसन्न हो रहा है—आनंदित हो रहा है, इसलिए कि भगवान मिल गये हैं। यह मरने से डरता है—शून्य होने से डरता है। इसने भगवान से भी, शून्य से भी बचने की आखिरी तरकीब बना ली है। यह आदमी कभी सत्य को नहीं जान पाता बल्कि यह अपने ही मन के किसी प्रोजेक्शन को, कल्पना को जानता रहता है। सीख भी पाता है, लेकिन उसे नहीं जान पाता—'जो है,' और उसे जानना हो, तो किसी न किसी तरह शून्य के खड्ड में गुजरना ही पड़ेगा—उसमें गिरना ही पड़ेगा। वह चाहे किसी व्यथा से, कोई गिर जाय।

इधर मैं मानता हूं कि नयी कला शून्य के गड्ढे के आसपास भटक रही है—वह तख्ती के आसपास, जहां

लिखा है—यहां खत्म होती है और इसलिए सब मापदण्ड गड़बड़ हो गये हैं—सब रंग रेखा गड़बड़ हो गयी है। स्वयं कुछ झांकना शुरु हुआ है, जो निगेटिव है उससे। पाज़ीटिव खो गया है, साफ शक्ल नहीं रह गयी है अब। क्या है? यह भी कहना मुश्किल है। वह पेंटर भी पेंट करके यह नहीं कह सकता—कि क्या है, यह जो पेंट किया है—क्या है? पाज़ीटिव हो तब तो वह कहता है कि भगवान कृष्ण मूर्ति बजाते खड़े हैं। वही पेंट किया था उसने, कल तक! सब साफ सुथरा था—चीजों की रेखाएं थीं। कभी सब गड्ड मड्ड नहीं हो जाता था, अब सब गड् मड्ड हो गया है अब सिर्फ फ्रेम भर साफ रह गयी है। बाकी भी, फ्रेम के जो है, वह सब गड़बड़ हो गया है और इसलिए फ्रेम खो जायेगी। बहुत ज्यादा दिन तक पेंटिंग पर फ्रेम नहीं चल सकती, क्योंकि जो अंदर बनाया जा रहा है, वह फ्रेम में बैठने वाला नहीं है। फ्रेम पुरानी है, जहां सब ढांचे में बैठता था—उसके चारों तरफ फ्रेम है। पेंटिंग कहीं शुरू होती थी, कहीं खत्म होती थी। अब वह न कहीं शुरू होती है, न कहीं खत्म होती है। वह एक अनंत शून्य के साथ साक्षात्कार कर रही है और उस साक्षात्कार में कुछ हो रहा है, जो कभी नहीं हुआ था। यह मैं मानता हूं कि अब तक पुरानी पेंटिंग ने कैमरे का काम किया था—फोटोग्राफ का काम किया था। कैमरा नहीं भी था, उसकी जरूरतें उसने पूरी कर दीं। पहली दफा पेंटिंग फोटोग्राफ से मुक्त हो रही है—कैमरे से मुक्त हो रही है। वहां आ रही है, जहाँ चीजें जैसी हैं। लेकिन चीजें जैसी हैं, उनके साथ शून्य जुड़ा हुआ है और इसलिए मुश्किल होता चला जा रहा है। सब तरफ वह हो रहा है—काव्य भी वहीं पहुंच रहा है जहां अर्थ खो जायेगा; क्योंकि जब तक काव्य में अर्थ है, तब तक शून्य प्रगट नहीं हो सकता। और जब तक अर्थ की बंधी हुई व्यवस्था है तब तक वही प्रगट होगा जो सीमा में आता है। इसलिए उपनिषद् भी जो नहीं कह सके और लाओत्से जैसे लोग जो न कह सके, वह हो सकता है कि आने वाले दिनों की कोई पेंटिंग—कोई कविता उसे कहेगी लेकिन उसे समझना मुश्किल हो जायेगा। और उसके आसपास भटकने वाले अगर पागल हो जायें, तो आश्चर्य नहीं है। मेरी समझ यह है कि जिनको हम संत कहते हैं महात्मा कहते हैं, वे मुश्किल से कभी कोई शून्य के पास से गुजरता हैं। यह सब विधायक के, पोज़ीटिव के पास ही घूमता रहता है। शून्य के पास तो कुछ लोग गुजरते हैं जैसे नीत्से जैसा आदमी गुजरता है तो पागल हो जाता है। पहुंच गया वहां, जहाँ दुनिया खत्म होती है। छलांग लगाता तो कुछ बात हो जाती। छलांग नहीं लगाता है, फिर वह पागल हो जाता है, क्योंकि शून्य को देखने के बाद लौटकर कोई अगर आये तो पागल हुए बिना और कोई रास्ता नहीं रह जायेगा। घूम जाये तो कुछ बदल जाय और अगर लौट आये तो सब मुश्किल हो जाय। इधर पचास वर्षों में दुनिया के श्रेष्ठतम चिन्तन करने वाले—चित्रण करने वाले—गीत गाने वाले सभी पागल होने के करीब पहुंच गये हैं। वे कहीं शून्य के आसपास भटक रहे हैं। तो जो छलांग लगा जायगा वह उस अवस्था में हो जायेगा, जहाँ बुद्ध और लाओत्से जैसा आदमी कभी प्रवेश करता है। लौट आयेगा जो वह इस दुनिया में पागल हो जायगा, क्योंकि जो भी देख आया है उसको भुला भी नहीं सकता है। जिसके करीब की झलक पा ली है, उसे मिटा भी नहीं सकता है और अब कभी जो यहां चारों तरफ है इससे भी राजी नहीं हो सकता है, क्योंकि उसने और कुछ देखा है जिसका इससे कोई मेल नहीं, ताल नहीं। जिसको क्राइसिस कहें—इस वक्त जो संकट हैं, सारी मनुष्य जाति के चित्त के ऊपर, वह यह है कि हमारी सारी थींमिंग पोज़ीटिव माइंड की है और सारी विकास की स्थिति वहाँ ले जा रही है जहाँ निगेटिव माइंड पैदा होना चाहिए। यह मेरा कहना है कि निगेटिव माइंड की ट्रेनिंग देनी चाहिए और तब नीत्से पागल नहीं होगा और तब हमारा वानगाग भी पागल नहीं होगा और तब हमारा सामान्य आदमी भी—निगेटिव से जो निकलता है, उसको पहचान सकेगा, पकड़ सकेगा। वह उसे देख सकेगा कि इसमें भी कुछ हैं। वह नहीं पूछेगा—क्या है। वह यह न देख सकेगा, जो अभी है। अभी एक पेंटिंग के पास खड़े होकर एक आदमी पूछता है, यह क्या है? तब तक समझना जाहिए उसको कोई निगेटिव

माइंड की ट्रेनिंग नहीं हो पायी है। फिर वह देखेगा। कभी हम इस वृक्ष के पास खड़े होकर यह नहीं पूछते हैं कि यह क्या है, वे फूल क्यों खिले हैं, यह भी नहीं पूछते हैं। चांद इस जगह क्यों अटका हुआ है--यह भी नहीं पूछते हैं। चीजें हैं, लेकिन एक पेंटिंग के पास हम खड़े होकर पूछते हैं ऐसा क्यों है? यह क्या है। तो सारी दुनिया को निगेटिव माइंड के ट्रेनिंग की जरूरत है। हम जिस दुनिया से गुजर गये हैं, वह पोजीटिव माइंड की थी--वह बचकानी थी-वह गयी। अब एक अत्यंत प्रौढ़ दुनिया आयेगी, जो निगेटिव माइंड की होगी। बीटल हैं, हिप्पी हैं, बीटनिक हैं, ये सब निगेटिव माइंड के आस-पास ही परेशान हो रहे हैं और अगर आप ट्रेनिंग नहीं देते तो, ये सब पागल हो जाने वाले हैं।

तो निगेटिव माइंड की-शून्य की चर्चा भी होनी चाहिए, साधना भी होनी चाहिए। मैं तो जो साधना शिविर करता हूं, वह शून्य के ही लिए-यानी, कैसे एक आदमी थोड़ी देर के लिए, चौबीस घंटे के लिये न सही--पंद्रह मिनट के लिए बिल्कुल शून्य हो जाये। थोड़ा तो पहुंचे वहाँ, जहां सब खो जाता है। और अगर इसका थोड़ा सा प्रयोग बढ़े, तो आपके जीवन में एक नया ही द्वार खुलता है जिसका आपको कोई ख्याल ही नहीं था और वहीं तो वे किरणें आनी शुरू होती हैं जो सत्य की हैं। मैं तो शून्य को ही ब्रह्म कहता हूं और जिसकी शून्य की तैयारी है वह ब्रह्म का अधिकारी हो गया है और जिसकी शून्य की तैयारी नहीं है वह ब्रह्म का अधिकारी नहीं है। और शून्य के पहले जिस ब्रह्म को आप मान लेते हैं, वह झूठा है—माना हुआ है और केवल कंफर्टेबल है, आपको थोड़ी सी सुविधा में कर देता है। उससे ज्यादा उसका कोई मूल्य नहीं।

प्रश्न—क्यों कोई जानना चाहे अज्ञात को, अन-नोएबल को, अज्ञेय को, क्यों कोई जानना चाहे?

उत्तर—जैसे हम यह पूछते हैं कि क्यों कोई जानना चाहे, वैसे हम बता देते हैं कि क्यों हमारे भीतर है और बेचैन करता है? वह जो व्हाई है वह हमें बेचैन करता है, यानी इसे भी हम सीधा स्वीकार नहीं कर सकते कि अज्ञेय को हम जानें। हमारा मन पूछता है क्यों है अज्ञेय? क्या है अज्ञेय? क्यों है, है भी क्यों, जानना चाहते हैं। अगर, बहुत कुछ देखा जाय कि हम क्यों जानना चाहते हैं अज्ञेय को तो यह भी उसको जानने की ही कोशिश है, क्योंकि यह बिल्कुल अज्ञेय है कि मैं क्यों जानना चाहता हूं। तो, मेरा कहना यह है कि वह जो 'ह्युमन स्प्रिट' है--'मनुष्य की आत्मा' है, अज्ञेय को जानने की आकांक्षा है वही है। इस पूरे जगत में आदमी भर पूँछ रहा है, और सब आदमी भी नहीं पूँछ रहे हैं क्यों? और कम आदमी पूछ रहे हैं! आदमी का हिस्सा है वह--आदमी होने का नीयति और भाग्य है वह! असल में हम रुक ही नहीं सकते। हम आदमी हुए और हम पूँछेगे और हमारे भीतर विवेक हुआ और हम पूछेंगे क्यों अस्तित्व है? क्यों यह सब है?

यह नहीं होता, तो हर्ज क्या था। यहाँ बैठकर हम बात कर रहे हैं यह बात नहीं होती, तो हर्जा क्या था, क्या फर्क पड़ता था। यह क्यों हो रहा है, यह हम क्यों इकट्ठे हो गये हैं? यह हम बिना पूछे नहीं रह सकते। यह पूछना ही पड़ेगा। यह जो 'क्वेस्ट' है—यह जो पूछना है यह पूछना ही मनुष्य की आत्मा है। यानी, यहीं से मनुष्य शुरू होता है इस पूछने से, इस जिज्ञासा से और इसलिए इस जिज्ञासा पर क्यों नहीं लगाया जा सकता है, क्योंकि वह बेमानी है इस जिज्ञासा पर, कि हम क्यों जिज्ञासा करें। यह तो जिज्ञासा की हुई है, इसलिए जिज्ञासा पर कोई क्यों नहीं जोड़ा जा सकता, क्योंकि वह जिज्ञासा ही रास्ता है। मेरी आप बात सुन रहे हैं न? और तब एक तरह का, जिसको एनीफिनिटिग्रेट कहते हैं, लाजिकों में हो जाता है। हम पूछें क्यों जिज्ञासा कोई करे, फिर हम पूछें कि जिज्ञासा पर भी कोई क्यों पूछे, वह बात तो कुछ मतलब की होती नहीं। इतना तय है कि जिज्ञासा है और वह मनुष्य की चेतना जितनी विकसित होती है उतनी तीव्र होती है। जिज्ञासा को बचाने की कोशिश भी हम करते हैं, क्योंकि वह बड़ी बेचैन करने वाली है, वह

घबराने वाली है। शराब पी लेते हैं, कि क्यों से छुटकारा हो जाये, वह न पूछे कि क्यों। नींद ले लेते हैं, बेहोश हो जाते हैं, मेस्कलीन ले रहे हैं। वह क्यों न लें, क्यों मिट जाय हमारे भीतर से, लेकिन वह क्यों मिटता नहीं, क्यों खड़ा है। जरूर, विराट प्रयोजन में इसका कोई अर्थ है, क्योंकि जैसे ही थोड़ी बुद्धि विकसित हुई कि वह क्यों खड़ा हुआ है। छोटा सा बच्चा भी उस क्यों से मुक्त नहीं है। एक चीटा चला जा रहा है, वह उसको मार डालता है। हम क्या सोचते हैं कि वह चीटे का दुश्मन है, न। वह सिर्फ यह जानना है कि यह क्यों चल रहा है, क्या चल रहा है, भीतर क्या है। जो चल रहा है वह क्या है, वह—उसे तोड़ दो। न चलने वाली चीज की फिक्र नहीं करता लेकिन चलने वाली चीज की एक छोटा सा बच्चा भी मिसल कर देखना चाहता है कि मामला क्या है, यह क्या हो रहा है, यह क्यों चल रहा है, यह गति कहाँ है, क्यों हमारे भीतर है। मानना चाहिये कि क्यों ही मनुष्य की आत्मा है—'दी व्हाई'। और इसलिए जितना विकास होगा आदमी का उतना वह जो 'दी व्हाई' है बढ़ता चला जायगा। और, आखिरी सीमा पर समग्र रूप से मनुष्य पूछता है, क्यों? समग्र रूप से वह तभी पूछ सकता है जब उसके चित्त में कोई भी रेडीमेड उत्तर न रह गया हो। यानी, पोजीटिव माइंड पूरी तरह खत्म हो गया हो। पोजीटिव माइंड नहीं पूछता है कि क्यों। वह कई चीजों को मान लेता है इसलिए पोजीटिव है, वह मान लेता है। वह शक ही नहीं करता, वह संदेह ही नहीं करता, डाउट ही नहीं करता। पोजीटिव माइंड मान लेता है। मान लेना, वह जो बिलीविंग माइंड है, वह पोजीटिव माइंड है। वह जो डाउटिंग माइंड है - निगेटिव माइंड है और जिस दिन डाउट टोटल होता है जिस दिन पूर्ण हो गया संदेह, उसी दिन छलांग लग जाती है। आप वहाँ खड़े हो जाते हैं जहां व्हाई का उत्तर है, लेकिन उस उत्तर को आज तक यहां कोई नहीं ला सका। उसे जानकर भी वह लौटकर यही कहता है कि जो जाना है उसे कह नहीं सकता। लेकिन, जब तक नहीं हम उस छलांग में गुजर जाते, वह व्हाई हमको पीछे धक्का मारता चलेगा, और जो आदमी जितना ज्यादा पूछता है उतना ही ज्यादा आदमी है। जो आदमी जितना ही कम पूछता है उतना ही कम आदमी है। उसके लिए कोई ह्यूमनस्प्रिट, यानी पूछना, यानी संदेह, यानी स्वीकार न कर लेना, जैसा जो कुछ है—कुछ भी स्वीकार न कर लेना है। वह अस्वीकृति की शक्ति—और संदेह की, जो जिज्ञासा की तीव्र कामना है भीतर, वही मनुष्य आत्मा है और वह है। और, यही पूछा जा सकता है कि वह क्यों है क्योंकि यह तो फिर वही बात हो गयी। वह क्यों है, यह नहीं पूछा जा सकता है। क्यों है, यह बात नहीं पूछी जा सकती। वह है, ऐसा है।

प्रश्न—लेकिन, जैसा पाजीटिव को इंक्रीमेंट अगर नहीं है, तो हर निगेटिव माइंड की त्रुटियां निर्माण न कर, क्या समाज कुछ यह करने लगे कि जो हमें हर आने वाले निगेटिव माइंड की अप्रोच को बढ़ावा दे, या तो उसे जानने की कोशिश में मदद करे।

उत्तर - निगेटिव माइंड आपका संग्रह किया हुआ कोई भी बढ़ावा नहीं दे सकता है। यह ऐसा ही है जैसे एक आदमी कहे कि मैं भिखारी होना चाहता हूं और संपत्ति इकट्ठी करना चाहता हूं, ताकि संपत्ति मेरे भिखारीपन को बढ़ावा करे। भिखारी होने का मतलब है संपत्तिहीन होना। एक आदमी देखता है कि मैं संपत्ति इसलिये इकट्ठा करता हूं, कि कल जब मैं भिखारी होऊं तो मुझे सुविधा रहे भिखारी होने में। यह तो उल्टी बात हो गयी न? निगेटिव माइंड का मतलब यह है कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं—ऐसी स्थिति मेरी निरंतर बनी रहे। तो, जो भी मैं जान लूंगा वह उसमें बाधा बनने वाला है—सहयोगी बनने वाला नहीं है, क्योंकि उसको कम करेगा। हमें ख्याल भी नहीं रह जाता धीरे-धीरे, कि हम कुछ भी नहीं जानते और इतना ज्ञान इकट्ठा कर लेते हैं कि मुश्किल हो जाती है।

एक मुसलमान फकीर हुआ है बाहबी। वह एक गांव से गुजर रहा है। सवेरे का वक्त है और आज दिन भर से उसे कोई नहीं मिला। रास्ता भटक गया है। एक

छोटा सा बच्चा एक दिया जला कर मंदिर की तरफ जा रहा था। उस बच्चे को रोककर वह पूछता है, दिया तूने जलाया है ? उसे कहाँ ले जा रहे हो ? तो, वह बच्चा कहता है कि मंदिर में चढ़ाने जा रहा हूं और दिया मैंने जलाया है। वह आदमी पूछता है, तूने ही जलाया है, तेरे सामने ही ज्योति जली है ? तू बता सकता है, यह ज्योति आ कहां से गयी, कहां से आयी कैसे आयी ? वह बच्चा बाहबी को देखता है और फूंक मार कर उस दिये को बुझा देता है और बाहबी से कहता है कि ज्योति चली गयी, बिल्कुल आपके सामने। वह कहां चली गयी कैसे चली गयी--आप बतायेंगे तो फिर मैं भी कुछ सोचूं कि यह कहां से आयी थी। वह बाहबी खड़ा है। फिर उस बच्चे के पैर पर गिर पड़ा। और,वह कहता है कि मुझे बड़ा भ्रम था कि मैं जानता हूं कि जीवन कहां से आया और कहां जायेगा। सच तो यह है कि तूने मुझे अज्ञान में पटक दिया। मैं इस ज्योति को भी नहीं जानता कि कहीं चली गयी। लेकिन, तूने मुझ पर बड़ी कृपा की। जिन गुरुओं के पास मैंने बहुत कुछ सीखा उनसे भी मुझे उतना नहीं मिला और आज तेरे पास से यह सीख--कर जाता हूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। यह ज्योति कहां चली गयी है ?

एक ज्ञान का सीखना है। मैं मानता हूं कि एक अज्ञान का सीखना है। अज्ञान ही निगेटिव माइंड को पैदा करने का रास्ता है और ज्ञान का सीखना पोजोटिव माइंड को सीखने का रास्ता है। सारी संस्कृति सारी सभ्यता, सारे विद्यालय, सारे गुरू, सारे शिक्षक पोजोटिव माइंड को पैदा करवा रहे हैं। और इसीलिये तो यह होता है कि विश्वविद्यालय से निकले हुए आदमी की प्रतिभा खत्म हो जाती है। उसका कारण है। पोजीटिव माइंड मजबूत हो जाता है और निगेटिव नहीं रह जाता है उनके पास, इसलिए यह हुआ कि आज तक विश्वविद्यालय में जो नहीं गये थे, उन्होंने कुछ अविष्कार भी किया। उनने,कुछ खोज भी की लेकिन वह विश्व--विद्यालय में जाने वाला एकदम मुर्दा हो जाता है। उसका पोजोटिव माइंड मजबूत है और जो भी जाना जा सकता है, खोजा जा सकता है वह हमेशा निगेटिव माइंड का काम रहा है।

(क्रमशः)

●

बहुत से मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों की मुझे याद आती है। उनमें जाने वाले चेहरे भी मेरी आंखों में घूमते हैं। लेकिन फिर बहुत आश्चर्य होता है कि जीवन भर प्रभु की यात्रा करने वाले कितने उन सीढ़ियों को चढ़ पाते हैं जो प्रभु की ओर ले जाती हैं।

मनुष्य का हृदय ही जब परमात्मा का मंदिर न बने तब तक किसी भी मंदिर में उनका प्रवेश नहीं हो सकता है। और प्रेम ही जब तक प्रार्थना न बने तब तक कोई प्रार्थना प्रार्थना नहीं हो सकती है। और जब सत्य ही स्वयं की अनुभूति न हो तो शास्त्र क्या करेंगे ? शब्द क्या करेंगे ? सिद्धान्त क्या करेंगे ? सत्य स्वयं के अतिरिक्त कहीं नहीं है स्वयं के अतिरिक्त सत्य की खोज मिथ्या है।

●●

द्वारका, सौराष्ट्र में आध्यात्मिक साधना शिविर

आचार्य श्री रजनीश जी के सान्निध्य में

दिनांक : २८, २९, ३० एवं ३१ अक्टूबर ६९

शिविर स्थल : श्री लोहाणा कन्या छात्रालय, द्वारका।

प्रवेश की अन्तिम तिथि : २५ अक्टूबर ६९

शुल्क : ३५) रु० प्रति सदस्य

संपर्क सूत्र : श्री पुष्कर भाई गोकाणी,
जवाहर रोड, द्वारका (सौराष्ट्र—प० रेलवे)

आजोल साधना शिविर में आचार्य श्री के द्वारा दिये प्रवचनों की अनुपम कृति

अन्तर्यात्रा

(साधना के जगत् में आचार्य श्री के व्यक्तित्व की मौलिक सृजनात्मक वाणी)

अपनी प्रति शीघ्र ही सुरक्षित करा लें : मूल्य—३/५० न० पै०

प्रकाशक : **जीवन जागृति केंद्र**, रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
१४६, डा० डी० एन० रोड, बम्बई : १

शीघ्र प्रकाशित :

सत्य की खोज

(आचार्य श्री के जूनागढ़ साधना शिविर में दिये गये ५ अद्भुत प्रवचन)

प्रकाशक : डा० एच० पी० शुक्ल
श्रीमती जयवंती शुक्ल, जूनागढ़ (सौ०)

आपके मित्रों को आचार्य श्री की दिव्य वाणी पहुँचाइये :

हमारे नवीन प्रकाशन :

(१) युवक कौन ? मूल्य ३० न० पै०
(२) युवक और यौन मूल्य : ३० न० पै०
(३) व्यस्त जीवन में ईश्वर की खोज मूल्य २५ न० पै०

संपर्क सूत्र : अरविंद कुमार, कमला नेहरू नगर, जबलपुर।

धुम्रपान के अनोखे आनंद के लिये

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता वृजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

WHERE COURTESY IS YOUR HOST

Kwality Restaurant

SADAR JABALPUR

Sole Distributors

FOR

Kwality Ice Cream

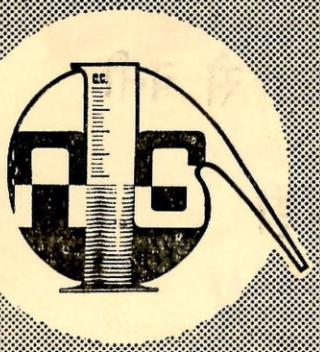

★ NICKEL SULPHATE
★ NICKEL CARBONATE
★ NICKEL FORMATE
★ SODIUM FORMATE
★ TRI CALCIUM PHOSPHATE B.P.C.
★ PHOSPHORIC ACID
Technical 85% Water White

Manufacturers:

ANANG CHEMICALS

FACTORY:— Kolbad Road
Panch Pakhadi
J. K. Gram
THANA
Maharashtra
Phone—591576

OFFICE:— 20,"L.K. Market"
Zaveri Bazar
Bombay-2 B. R.
Phone—29528

आधुनिक रहन-सहन के लिये
आरामदायक एवं उच्चकोटि
के सोफा-कम-बेड तथा
वुडन फर्नीचर के

निर्माता :

अशोक फर्नीचर मार्ट

गंजीपुरा मेन रोड, जबलपुर, म.प्र.

उत्तम तम्बाकू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

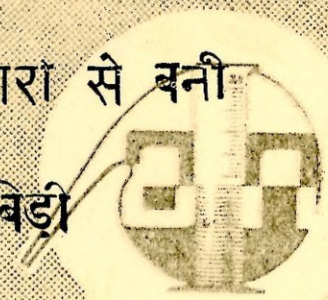

—o—

मोहनलाल हरगोविंददास

(जबलपुर म० प्र०)

When you wear

Sikova

EMBROIDERED FABRICS

the best compliments come to you!

Stronachs Z 34

Kwality

ICE CREAM

90-A, Industrial Area, Ludhiana

●

ANNOUNCE THE APPOINTMENT OF THE FOLLOWING PARTIES
AS THEIR WHOLESALE AGENTS FOR ICE CREAM

1. M/s Kishore & Co., 4-A, Lawrence Road, Amritsar.
2. M/s Emkay Traders, Chandra Buildings, Jullundhur.
3. M/s Kwality Ice Cream Centre, Canal Road, Jammu.
4. M/s Upkar Agencies, Dharampura, Patiala.
5. M/s Subhash Coffee Bar, Moga.
6. M/s Sood & Co., Sadar Bazar, Ambala.

●

THE PARTIES INTERESTED FOR SUB-AGENCIES
IN THE ABOVE NOTED STATIONS MAY CONTACT THESE FIRMS

मानसेवी सम्पादक अजितकुमार, एम. काम., एल एल. बी., स्वत्वाधिकारी प्रकाशक युक्रांद प्रकाशन समिति, कमला नेहरू नगर, जबलपुर। मुद्रण स्थल : जबलपुर को-आप० प्रिंटिंग प्रस, गोलबाजार, जबलपुर।